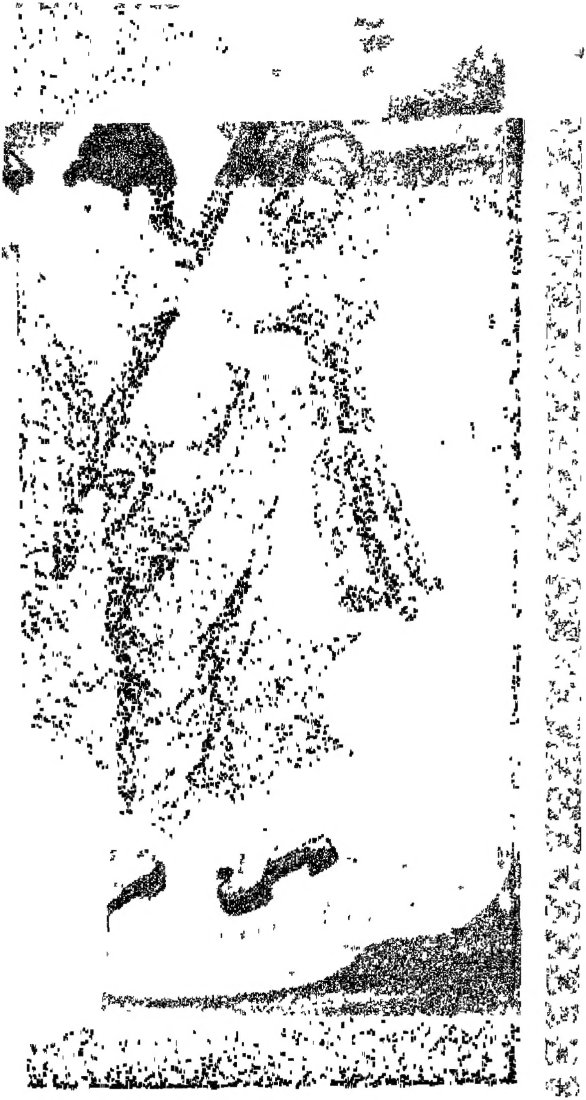

— श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी

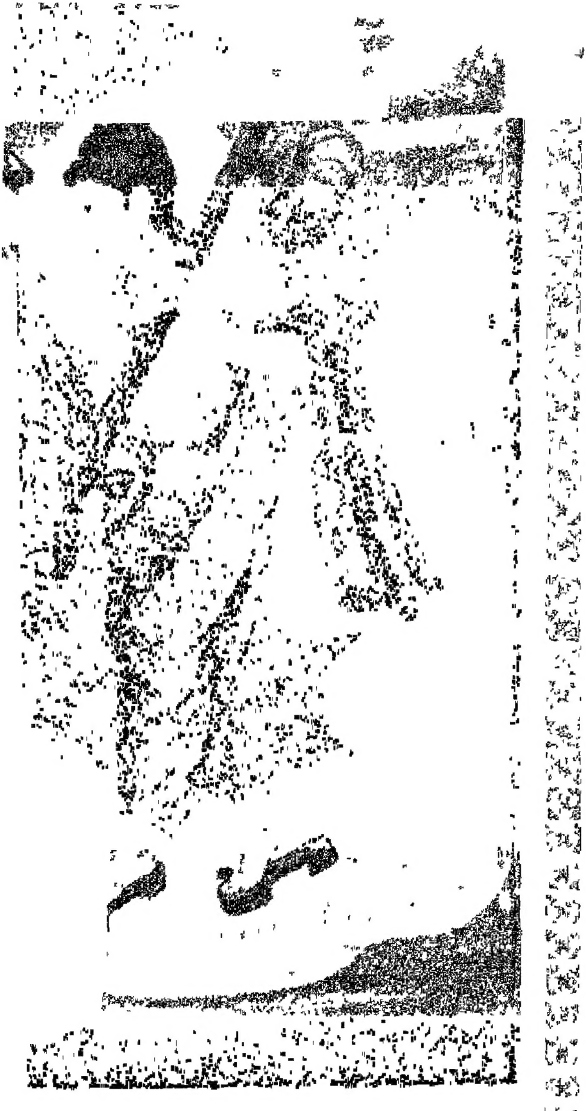

—श्री फूलनजी कुमारी

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, पुस्तकालय
इलाहाबाद

वर्ग संख्या..
पुस्तक संख्या......................................
क्रम संख्या..........१४०५६..........................

[illegible], [illegible]
द्वारा भेंट

॥ श्रीहरिः ॥

भागवत-महिमा (नाटक)

(श्रीमद् भागवत-माहात्म्य)

लेखक
श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी

प्रकाशक
संकीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर
(झूसी) प्रयाग

प्रथम संस्करण 1000 प्रतियाँ | मकर संक्रान्ति २०३८ जनवरी-१९८२ | न्यौछावर [illegible]

मुद्रक—श्री बंशीधर शर्मा भागवत प्रेस, ८/२ मुट्ठीगंज प्रयाग।

[illegible] माहात्म्य ([illegible]) की विषय-सूची

[illegible] पृ० [illegible] से १३ तक । १. [illegible] अङ्क में परीक्षित, [illegible] तथा कुसुमसरोवर पर महामहोत्सव-उद्धवजी [illegible] पृ० [illegible] से [illegible] तक । २. द्वितीय अङ्क, भक्ति, [illegible] के उद्धार [illegible] नारदजी का [illegible] सनत्कुमारों द्वारा [illegible] कथा सुनाना [illegible] पृ० से [illegible] तक । ३. [illegible] परीक्षित द्वारा [illegible] द्वारा परीक्षित को [illegible] पर परीक्षित को कथा सुनाना पृ० [illegible] से [illegible] तक । [illegible]. चतुर्थाङ्क आत्मदेव [illegible] द्वारा धुन्धुकारी [illegible] पृ० से [illegible] पृ० तक ।

चित्र-सूची

[illegible] पर [illegible] चित्र । २. परीक्षित [illegible] पृ० [illegible] । ३. व्रज में [illegible] परीक्षित पृ० [illegible] । ४. [illegible] और [illegible] परीक्षित, पृ० [illegible] । ५. [illegible] परीक्षित पृ० [illegible] । ६. [illegible] पृ० [illegible] । ७. [illegible] और यमुना पृ० [illegible] । ८. श्री यमुनाजी [illegible] पृ० [illegible] । ९. कुसुमसरोवर पर कीर्तन पृ० [illegible] । १०. [illegible] पर महामहोत्सव पृ० [illegible] । ११. लताकुंज से [illegible] का प्रकट होना पृ० ३० । १२. नारदजी और भक्ति,ज्ञान [illegible] पृ० [illegible] । १३. भक्ति नारद, पृ० [illegible] । १४. नारद और [illegible] पृ० [illegible] । १५. नारदजी द्वारा सनकादि से कथा कहने [illegible] पृ० [illegible] । १६. नारद द्वारा भक्ति का उद्धार पृ० [illegible] । १७. [illegible] का माहात्म्य पृ० [illegible] । १८. शुक द्वारा भाग- वत [illegible] पृ० [illegible] । १९. परीक्षित,शमीक मुनि पृ० [illegible] । २०. [illegible] पृ० [illegible] । २१. आत्मदेव और संन्यासी पृ० [illegible] । २२. [illegible] पृ० [illegible] । २३. गोकर्ण और आत्मदेव, पृ० [illegible] । २४. आत्मदेव और धुन्धुकारी प्रेत,पृ० [illegible] । २५. गोकर्ण की कथा [illegible] पृ० [illegible] । २६. धुन्धुकारी [illegible] पृ० [illegible] । २७. गोकर्ण [illegible] पृ० [illegible] । २८ भागवत [illegible] पृ० [illegible] ।

भूमिका

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] विद्वानों के [illegible] क्षेत्र में नाटक [illegible] आज्ञा से [illegible] उन्होंने विशिष्ट [illegible] लिखा [illegible] कहीं [illegible] की भी सुधि नहीं रही। [illegible] लिखा [illegible] पुनः [illegible] उनके शरीर में प्रवेश कर गया। [illegible] नहीं [illegible] उनके [illegible] हैं।

[illegible] में अद्भुत [illegible] है; [illegible] अपनी कथा में [illegible] का माहात्म्य इतना ही है कि नाटक [illegible] के समय में [illegible] काव्य-कार्य होते हैं, जो [illegible] जाते हैं; एक [illegible] होते हैं, जो [illegible] को [illegible] हैं। वह इतने चित्ताकर्षक होते हैं कि [illegible] मन्त्रमुग्ध [illegible] अपने आपको भूल जाते हैं। एक बार [illegible] में एक "नील के गोरों का अत्याचार" नाटक दिखाया गया, उसमें पं० ईश्वरचन्द्र जी विद्यासागर भी बैठे देख रहे थे; जब नीलहे गोरे ने [illegible] पर अत्याचार करके [illegible] को [illegible] दिखाया, तब विद्यासागर से नहीं रहा गया। [illegible] कर रहा था, उसे वह उठाकर जूते से पीटने लगे, इस पर [illegible] हुए। नाटक का यही [illegible] है, कि [illegible] उस दृश्य को [illegible]।

[illegible] नट नटों के छिपे हुए दृश्य को नाटक कहते हैं यह [illegible] रूप में संस्कृत अथवा प्राकृत भाषा में रचे हुए काव्य का [illegible] है। नाटकों पर साहित्यिक ग्रन्थों में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। नाटकों के नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग,

[illegible] ग्रंथों जैसे [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] उत्तररामचरित, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], मृच्छकटिक, [illegible] तथा [illegible] आदि [illegible] का [illegible] [illegible] हैं [illegible] [illegible] के [illegible] हैं, जिनके [illegible] [illegible] हैं, [illegible] [illegible] हैं [illegible] [illegible] [illegible] के [illegible] की [illegible] [illegible] है—[illegible] [illegible] हैं, [illegible] है और [illegible] [illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] का [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] हैं तथा [illegible] हैं, [illegible] के [illegible] हैं, [illegible] [illegible] हैं, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] तथा अनेक [illegible] के [illegible] हैं। इस प्रकार [illegible] [illegible] का [illegible] है। [illegible] [illegible] के [illegible] प्राकृत भाषाओं में [illegible] [illegible] [illegible] में थी। [illegible] ७ प्राकृत [illegible] [illegible] थीं : १—मागधी, २—आवन्तिका, ३—प्राच्या, ४—शौरसेनी, ५—अर्धमागधी, ६—बाह्लीका, ७—दाक्षिणात्या। [illegible] प्राकृत [illegible] १—शकार, २—आभीर, ३—चाण्डाल, ४—शबर, ५—द्राविड़, ६—[illegible], और ७—[illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] ६ प्राकृत भाषायें थीं : १—[illegible], २—[illegible], ३—[illegible] ४—[illegible], ५—[illegible], ६—[illegible], और ७—[illegible] [illegible] [illegible] थीं : १—[illegible] २—मागधी, ३—[illegible], ४—[illegible] ५—

४ [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible] आदि [illegible] लिये जाते थे। वे सब [illegible] नाटक मंडली है; [illegible] किरीट [illegible] आदि- [illegible] पर रहते हैं।

[illegible] एक प्रकार के नाटकों की [illegible] किन्तु वे [illegible] नाटक [illegible] [illegible] हैं। [illegible] प्रभाव के कारण [illegible]।

[illegible] नाटकों में भी आती हैं, किन्तु वे श्रीकृष्ण [illegible] से [illegible] अभिनय [illegible] होने से श्रेष्ठ हैं।

हमारे यहाँ वृन्दावन में अनेकों रास मण्डलियाँ हैं, जो देश परदेशों में भ्रमण करके दर्शकों का मनोरञ्जन करके [illegible] प्राप्त करती हैं। जो श्रीकृष्ण की लीला करने में सभी [illegible] हैं। रासधारी की संख्या चाहे [illegible] पर [illegible] है। फिर भी हमारे वृन्दावन में तीन रास मण्डलियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं (१) श्री स्वामी हरगोविन्दजी की, (२) श्री [illegible] जी शर्मा तथा (३) श्री स्वामी [illegible] शर्मा की। इन लोगों से ही मेरा मौलिक सम्बन्ध है, [illegible] आदि में लीला करते हैं।

एक जैन महात्मा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible]—

[illegible] नमः

[illegible] [illegible]

[illegible] दिसम्बर [illegible] [illegible] जनवरी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] प्रदेश में जाना है इसको [illegible] से [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कृपा [illegible] । कृपया पत्र प्रकाश करें ।

आपका [illegible]

[illegible] ।

इस पत्र के बारे में मैं [illegible] [illegible] [illegible]

प्रारम्भ कर दिया और लगभग [illegible] में यह ४—५ दिन में पूरा करके [illegible] के पास पहुँचा दिया। और यह भी लिख दिया कि [illegible] योग्य हो तो लिख देना इसे छपा भी दूँ। [illegible] स्वास्थ्य [illegible] इसने हमें [illegible] दिया। श्री स्वामी [illegible] हमारे [illegible] आश्रम में अपना [illegible] रहे हैं, उन्होंने कहा—मैं इसे पढ़ के [illegible] आपको लिखा है यदि आज्ञा हो तो?

[illegible] सुविज्ञ कलाकार, विद्वान [illegible] सकते हैं [illegible] तो विशुद्ध धर्म भावना [illegible] लिखा है। [illegible] नहीं [illegible] नहीं। [illegible] ने इसे स्वीकार किया तो ऐसे ही और [illegible] लिखने का [illegible] है।

प्रतिवाद

[illegible] संगम में
संकीर्तन भवन झूसी (प्रयाग)
[illegible] पूर्णिमा २०१८ वि०

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

भागवत-महिमा

श्रीमद्भागवत-माहात्म्य

([illegible])

प्रस्तावना

[illegible]

[illegible] सहित [illegible] करता है।

मङ्गलाचरण

[१]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[[illegible]]

अहा! आज [illegible] श्रीमद्भागवत की कथा [illegible]

[illegible]

इस [illegible] जनों के [illegible] से सार्थक [illegible] हो ! किन्तु अभी [illegible] तो बता ही नहीं।

[[illegible]]

[illegible]— [illegible] मैं अनुगृहीत हूँ, क्या [illegible] है ?

[illegible] किस नाटक का अभिनय करना है ?

[illegible]—[illegible] को देख नहीं रहे हो ! इनमें प्रायः सभी [illegible] हैं। इनके मस्तक पर तिलक लगे हैं, हाथ में [illegible] के सुमधुर नाम हैं, [illegible] की आँख [illegible] रहे हैं, [illegible] श्रीमद्भागवत [illegible] अभिलाषा से इसी प्रकार कह रहे हैं। [illegible] श्रीमद्भागवत के माहात्म्य सम्बन्धी अभिनय [illegible]।

[illegible]—[illegible], [illegible] ! आपने कैसी सामयिक बात कही ! [illegible] द्वारा [illegible] एक कथा [illegible] जिसमें श्रीमद्भागवत के माहात्म्य का [illegible] था तो आज उसी का अभिनय [illegible] किया [illegible]।

[illegible]—साधुवाद ! धन्यवाद ! धन्यवाद ! तुम्हारा [illegible] मैं भी यही चाहता था। यह नाटक दर्शकों के [illegible] है। हाँ, आज इसी का अभिनय हो। श्रीमद्भागवत [illegible] रूप हैं। भागवत श्रीकृष्ण का साक्षात् [illegible] है। उन्हीं का श्रीविग्रह है। वही नाटक हो।

छप्पय

[illegible] भागवत माहिं बिराजे कृष्ण कृपा करि।
[illegible] निज मूर्ति कृष्णहि ग्रन्थ रूप धरि॥
[illegible] [illegible] भक्ति [illegible] मिटावें।
[illegible] कहावें॥

[illegible]
(पुनि नाहिं [illegible], [illegible] करै।
[illegible]
१८—[illegible] और [illegible] है। [illegible]
[illegible] है। [illegible] है।)

भजन

यमुना तीर [illegible] है [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
यमुना [illegible] है, [illegible]

नट पुकारता है, आज, नहीं [illegible] कहाँ क्या
भला, यह गाने का समय है या अभिनय करने का ? देखो, न
दर्शक कितने उत्सुक हो रहे हैं, आओ रंगमञ्च पर ;

'आ रही हूँ' कहती हुई नटी का प्रवेश

नट—आज तो अत्यधिक [illegible] हो, मानो नई-नई दुलहिन
हो ?

नटी—हर समय की [illegible] अच्छी नहीं। समय देखकर बात
करनी चाहिये। हाँ, तो कहो आज्ञा है, आज कौन-सा
अभिनय होगा ?

नट—आज श्रीमद्वल्लभ [illegible] एवं [illegible] श्री [illegible]
महाराज के "आनन्द महिमा" नाटक का अभिनय होने
को बात है।

नदी—बहुत सुन्दर, बहुत अच्छा, तुमने इसी भाव से इसे याद किया है। भक्ति सम्बन्धी यह नाटक अनूठा है, किन्तु इन महाकवियों ने मेरा कुछ नहीं बतलाया है।

मह—क्यों क्या बात है, इन कवियों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?

नदी—मेरा बिगाड़ें क्या, बिगाड़ेंगे? मेरा तो वे किंचिन्मात्र भी नहीं बिगाड़ सकते। किन्तु ये सब बड़े रसिक हैं। इनको भक्ति चाहिये भाई! रसिकता का नाम नहीं। भक्तों के लिये अत्यन्त प्रिय है जैसे सोंठ मिर्च। परन्तु········

स—परन्तु क्या?

न—यही कि भगवान् का गुणगान करते हैं। वैसे भी यहां, कृष्ण प्रेम में पागल बने हैं, रोते हैं, चिल्लाते हैं। कथा-कीर्तन करते हैं। हम लोगों की नहीं, भक्ति भावना की स्तुति करते हैं, ब्रज की, ब्रजवल्लभ की महिमा गाते हैं। अच्छा है। यों तो भागवत महिमा का ही अभिनय है। भक्ति का मुख्य स्थान तो ब्रजमण्डल ही है। मथुरा वृन्दावन ब्रजमण्डल धन्य हैं, जहाँ भक्ति नित्य ही नृत्य करती रहती है। चलो मथुरा ही चलें।

[सब और नदी जाते हैं पर्दा गिरता है]

[१]

श्रीमद् भागवत माहिं बिराजैं कृष्ण कृपा करि।
वाङ्मयी निज मूर्ति कृष्ण हैं ग्रन्थ रूप धरि॥
कथा भागवत सकल शोक सन्ताप मिटावै।
सुख सरसावै सतत कृष्णपद प्रीति बढ़ावै॥
याको प्रति दिन प्रेमतें, पाठ करैं पातक मिटैं।
ते मुनि पावैं परमपद, तुरतहिं भव बन्धन कटैं॥

[२]

जासु भागवत चरन कमल नत शीश नवाऊँ।
कामधाम ह्वै कृष्ण कहाँ लौं महिमा गाऊँ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
कोटि मन्मथ लज्जित [illegible] [illegible] मुरलीधरौ ।
सुरी करत सुख [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] ॥

—(३)—

मङ्गल-आरती

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हैं, [illegible] [illegible] आरती होती है ।

श्रीमद्भागवत आरती

भागवत चरित अमृत पीजै ।
आरती सब मिलिकें कीजै ॥

दया के सागर हैं यदुनन्दन, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] आनन्दित ।
कमल मुख करें सुधाको [illegible], जिनहिं [illegible] बिन जीजै ॥१॥
नामको रसना करिकें ध्यान, करें सब [illegible] [illegible] [illegible] ।
नयन निरखें सब थल [illegible], कृष्णको कीर्तन नित कीजै ॥२॥
आदि जब [illegible] आवै, पुलक तनु सखी [illegible] [illegible] ।
प्रेम रस [illegible] [illegible], आरती [illegible] [illegible] कीजै ॥३॥
हियेमें [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] सब करें कृष्ण बिन [illegible], [illegible] [illegible] जीवन नाहिं कीजै ॥४॥
प्रेम [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] भव-सागर [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible], आरती [illegible] कीजै ॥५॥

(सब गाते हैं, [illegible] [illegible] हैं)

प्रथम अङ्क

दृश्य प्रथम

स्थान—मथुरा का राजभवन

[महाराज वज्रनाभ अपने भवन में उदास बैठे हैं। तभी द्वारपाल ने आकर प्रणाम करके निवेदन किया]

द्वारपाल—प्रभो ! अभी-अभी एक चर ने आकर समाचार दिया है, महाराजाधिराज परीक्षित् जी आपसे मिलने आ रहे हैं ! सौभाग्य ! महाराज वज्रनाभ ने कहा—मेरे ऐसे भाग्य हैं ! तब शीघ्र ही पुरोहित मन्त्रियों को बुलाओ। आगे चलकर महाराज का स्वागत करना है।

(द्वारपाल शीघ्रता से जाता है पुरोहित मन्त्रियों को बुलाता है, स्वागत का सबका संभार एकत्रित करता है और तुरन्त आकर महाराज से निवेदन करता है)

द्वारपाल—प्रभो ! स्वागत का सभी सामान समुपस्थित है पुरोहित जी, महाराज की प्रतीक्षा में खड़े हैं।

वज्रनाभ—चलो चलें !"

[मङ्गल बाजों के सहित एक गौ को आगे करके सभी लोग महाराज परीक्षित् की अगवानी करने नगर से बाहर जाते हैं। महाराज परीक्षित् रथ से उतर पड़े थे। वज्रनाभ मस्तक झुकाकर उनके चरणों में अभिवादन करते हैं। महाराज परीक्षित् उन्हें

[illegible]

...कार के अनन्तर सभी लोग प्रस्थान करते हैं। ...

... परीक्षित् श्रीकृष्ण रुक्मिणी का अभिनन्दन करते हैं।

[परीक्षित् द्वारा श्रीकृष्ण रुक्मिणी को आशीर्वाद]

परीक्षित्—बालक! मैं तुम्हारी कुशल क्षेम पूछने ही आया हूँ। तुम प्रसन्न तो हो? देखो, तुम किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करना। तुम अपने इन शत्रुओं की ओर से सेवा करते रहना। तुम्हारी सब प्रकार की रक्षा का भार हमारे ऊपर है।

वज्रनाभ ने विनीत भाव से कहा—बाबाजी! जब आप हमारे सिर पर हैं, तब हमें चिन्ता किस बात की? किन्तु एक चिन्ता मुझे अवश्य है।

परीक्षित्—वह क्या चिन्ता है?

न—आपने मुझे मरुस्थल का राजा तो बना दिया, मैं राज्य किस पर करूँ? यहाँ प्रजा तो है न, यहाँ की असहल प्रजा क्यों कहाँ?

श्रीमहल्ल ज्यों मल्ल बिनु, पानी बिनु ज्यों कूप,
बिनु प्रकाश को दिवस ज्यों, प्रजा बिना त्यों भूप।

(इस की बात सुनकर परीक्षित् कुछ काल सोचते रहे, ध्यान करके बोले)

[illegible] के राजा और परीक्षित् [illegible]

प—महाराज! तुमने अच्छी बात कही। [illegible] [illegible] प्राप्ति [illegible] हो सकते हैं। [illegible] [illegible] दुर्भिक्ष नहीं है। [illegible] [illegible] [illegible] रहते हैं, [illegible]

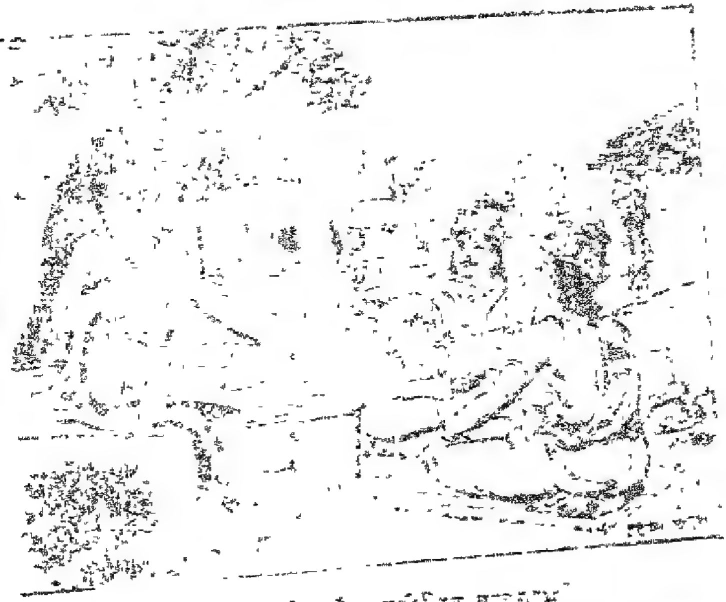

[illegible]

राजा परीक्षित्—[illegible]

[illegible]

(गोविन्द, नन्द और परीक्षित्)

१. नन्द और नागेन्द्र एक ही हैं। श्रीकृष्ण का आज्ञा

२ [illegible], कभी-कभी होता है, वे अवतार नहीं अवतारी

[illegible] प्रकार के अलंकार प्रकट होते हैं। [illegible] जो [illegible] से प्रकट होने [illegible] अन्तर्धान [illegible] किन्तु अनधिकारियों को इसके [illegible] हैं। [illegible] भगवान् श्री [illegible] की आराधना करो [illegible] सभी [illegible] का [illegible] तुम्हें वज्रनाभजी सहित [illegible] उद्धवजी का दर्शन भी हो जायगा।

अत्यन्त उत्सुकता से महाराज परीक्षित् ने पूछा— भगवन्! भगवत् लीला स्थलों का ज्ञान तो आपकी कृपा से हो जायगा, किन्तु उद्धवजी का दर्शन कैसे होगा? वे तो वृन्दावन में विराजते हैं?

शाण्डिल्य—यह सब तुम उद्धवजी के दर्शन होने पर उन्हीं से पूछना। मैं तो अब अपनी कुटिया पर जाता हूँ।

[शाण्डिल्य जी का प्रस्थान]

[पटाक्षेप]

दृश्य तृतीय

(स्थान—मथुरा-मण्डल)

[मथुरा मण्डल अब घोर वन नहीं रहा। महाराज परीक्षित्

[illegible]

[मनोहार]

यमुनाओं के किनारे श्रीकृष्ण गलियों बैठे थे,
सभी से एक तान-तान गाने लगा—

[५]

हमें तजि चन्द्र भयो मनभावौ।
मात ! प्राणपति पितु हित तजिकै, भये दुर्लभ दुख भावैं ॥
[illegible] सब बिसरी बिसरानि, मधुर हँसनि मुसकानी।
अब न मिलिहौ [illegible] ॥२॥
[illegible]
[illegible] ॥३॥
निरखि निधि [illegible] झाँकत पिय आवौ।
[illegible] ॥४॥

[illegible]—

[६]

निरखहिं निरखि पुनि-पुनि पछितावैं।
छिन-छिन पल-पल झाँकति झरोखा, पिय आवन सुधि पावैं ॥१॥
[illegible] बहुरंग [illegible] निरखि हियें जगावैं।
सब संसार सून्य सब लागत, तुम्हरे दरस दिखरावैं ॥२॥
रैनि न नींद भूख नहिं बासर, प्रियतम कहाँ गवाँवैं।
बिकल बावरी बिरह बिथानी, अब कौं ओर [illegible] ॥३॥
सीतल सरस सुखद सुन्दर अति, पद हिय कमल सुहावैं।
उर सरोज में राखि होय थिर, सुखद चरन सुधि आवैं ॥४॥
बिकल परम बिना [illegible], बिलखि-बिलखि रहि जावैं।
मधु रसाद बिनु प्रिय प्राणपति ! तुम्हें सब [illegible] ॥५॥

[इस पद तीसरी सहेली बिलख-बिलखकर गाने लगी]

[७]

बिना प्रियतम यह जीवन भार।
हियमें उठत अभूरी भारी, सीतल जग अंगार ॥१॥

[illegible] पानियाँ, [illegible]

[illegible] अविरल, [illegible] विवेक

[illegible] आलोकहि बखान करि [illegible]

[illegible] तरवार, सुन्दर करि

[illegible] कलरविनि, [illegible] गावे [illegible]

[illegible] लिख्यौ अरु लिखु [illegible]

[illegible] सुवरनी मानि,

[illegible] प्रतिबिम्बों को प्रेम

[[illegible] और यमुना]

[[illegible] सखी सहियाँ [illegible] जो थी [illegible] से [illegible] लगीं ।]

[illegible] कालिन्दी ! मुझ को हमारी [illegible] प्राणनाथ

[illegible] दिया था। सब उन्होंने विरह में व्याकुल [illegible] है,
और तुम [illegible] नहीं हो, इसका क्या कारण है?"

[illegible] श्रीकृष्ण की आनन्द [illegible] हैं, इसलिये वे
[illegible] हैं [illegible] गोपियाँ उन्हीं [illegible] के साथ
[illegible] श्रीकृष्ण कहीं जाते नहीं हैं। वे वृन्दावन का परित्याग
[illegible] एक पग भी नहीं जाते। राधा और कृष्ण का नित्य
[illegible] है। अक्रूरजी के संग श्रीकृष्ण, वृन्दावन की लीला
[illegible] कर गये थे। फिर वे वृन्दावन में लौट
[illegible] थे। [illegible] किन्तु [illegible] इस रहस्य
[illegible] उद्धवजी ने गोपियों को समझाया था। तभी उन्होंने
[illegible] ग्रहण नहीं किया। श्रीकृष्ण का नित्य संयोग
[illegible] तुम्हें भी उद्धवजी के दर्शन [illegible] जायें तो
तुम्हारा भी सब शोक मोह दूर हो जायगा।"

—[illegible] कालिन्दी! उद्धवजी के दर्शन कैसे हो
सकेंगे? वे तो प्राणनाथ की आज्ञा से बदरीवन चले
गये थे।

[illegible]—हाँ, बहिन! भगवान् भक्तों की इच्छा कभी व्यर्थ
नहीं होने देते। उद्धवजी ने इच्छा की थी कि वृन्दावन में
[illegible] बनकर रहूँ, जिससे गोपियों की चरणरज
उड़-उड़कर मेरे ऊपर पड़े। वृन्दावन तीन हैं, [illegible]
के मध्य में। नाम वृन्दावन, [illegible] वृन्दावन (कामवन),
[illegible] वृन्दावन (गोवर्धन राधाकुण्ड के बीच में कुसुम
सरोवर पर) सो उद्धवजी कुसुमसरोवर पर किसी
लतागुल्म के रूप में अब भी गुप्त रूप से अवस्थित
हैं। इनके रूप से वे बदरीवन में भी हैं। [illegible]
[illegible] हैं। [illegible] का स्वरूप है। तुम [illegible]

[illegible]

[श्रीयमुनाजी और श्रीकृष्ण [illegible]]

[illegible] भगवान् भक्तों को [illegible]

वीणा वेणु मृदङ्गादि बाजों से कीर्तन हो। तब उद्धवजी प्रकट हो जायँगे।

छप्पय

(२)

पूछें मधुकी प्रिया—मिलें उद्धवजी कैसे।
यमुना बोलीं—सुनो, कहाऊँ मिलिहैं जैसे॥
कहे धरि इक रूप व्रजविपिनमहँ निवसत।
लता तरुनि तना गुल्म बनि करहिं निवसत॥
उत्सवही तिनि रूप हैं, उत्सव प्रिय उद्धव सन्त।
कुसुम सरोवरहिं मिलहिं, उत्सवमें उद्धव मिलन॥

[३]

आवें भगवत भक्त कृष्ण गुन गावनि गावैं।
वीणा वेनु मृदङ्ग मजीरा मधुर बजावैं॥
कथा करें कमनीय ललित कीर्तन करि क्रन्दन।
नाम निरन्तर रटैं रमन राधा नँदनन्दन॥
प्रेम सुधन्वन डारिहैं, खिंचि परगट ह्वै जायँगे।
कथा कीरतन रज्जुतें, उद्धवजी बँधि जायँगे॥

[यमुनाजी के वचनों से श्रीकृष्णमहिषियाँ परम प्रमुदित हुईं। तुरत मथुरा में जाकर परीक्षित तथा वज्रनाभ से कालिन्दी की सभी बातें कहीं। उनकी आज्ञा से परीक्षित और वज्रनाभ कुसुम सरोवर पर महामहोत्सव करने की तैयारियाँ करने लगे।]

पटाक्षेप

चतुर्थ दृश्य

[स्थान—कुसुम सरोवर]

[कुसुम सरोवर पर महामहोत्सव हो रहा है। दसों दिशाओं

से भक्तवृन्द आ रहे हैं। कोई नाच रहे हैं, कोई गा रहे ताल मिला रहे हैं, कोई हँस रहे हैं, कोई रो रहे हैं, कीर्तन कर रहे हैं, कोई पद कीर्तन की धुनि में मस्त हैं कोई लीला कीर्तन कर रहे हैं। चारों ओर रस हो रही है, वातावरण में सरसता छाई हुई है। संकीर्तन की ध्वनि से आकाश मण्डल गूँज रहा है। भक्ति भवानी भव परित्याग करके नृत्य कर रही है। सर्वत्र उल्लास छाया हु मण्डलियों के ऊपर मण्डलियाँ आ रही हैं]

[कुसुम सरोवर पर कीर्तन]

एक मण्डली गा रही है, उसमें सभी भक्त ताल स्वर से—

"श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे।

हे नाथ नारायण वासुदेव॥"

नारियों का कमनीय जीवन [illegible]

[illegible]

दूसरी मण्डली आती है वह—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

इस महामन्त्र का कीर्तन कर रहे हैं—

तीसरी मण्डली आती है वह—

राधावर जय कुञ्ज विहारी।
मुरलीधर गोवर्धन धारी॥

इन नामों का कीर्तन झूम-झूम के कर रहे हैं—

चौथी मण्डली आती है वह—

राधेश्याम राधेश्याम श्याम श्याम राधे राधे।
राधे कृष्णा राधे कृष्णा कृष्णा कृष्णा राधे राधे॥

इन नामों का कीर्तन कर रहे हैं। नाच रहे हैं, गा रहे हैं, झूम रहे हैं।

पाँचवीं मण्डली आती है—

कीर्तन करती हुई। कीर्तन करने वाले सब लोग ताल स्वर मिलाकर सुमधुर स्वर में यह कीर्तन गान कर रहे हैं।

कहाँ अब लों दरस दिखाओ।

कृष्णचन्द्र के तुम अति प्यारे, हमको मित्र कहाओ ॥१॥
दिव्य देवगुरु बुद्धिमान अति, प्रभु के मन अति भाओ।
माला, गंध, सहित पट प्रभु के, लीन प्रसादी पाओ ॥२॥
देवभाग-सुत पंडित ज्ञानी, श्याम सखन नाओ।
आया तब प्रभु पास रहा निज, हमहूँ सोंप सिखाओ ॥३॥
बदरीवनमें वास करो प्रभु, आयुष सोम बढ़ाओ।
कृष्ण पादुका पूजि प्रेमसों, हरि नामनि नित गाओ ॥४॥
गुल्मलता बनि बनमें विहरो, व्रजरज तन लिपटाओ।
[illegible] प्रसाद लाधो तुम कृष्ण सखा अब आओ ॥५॥

परम आनन्द मूरति स्यामसु, आँखि दरसन सुख पाओ ।
आओ आओ ब्रजनन्दन प्रिय, भगवत कथा सुनाओ ॥६॥

दूजी मण्डली ठेठ ब्रजवासियों की आ रही है—
वे ढोल ढप मञ्जीरा सारङ्गी के सहित नाच-नाचकर गा रहे हैं—

रसिया

ऊधो ! तेरी बलि बलि जाऊँ, अपनो दरस दिखावै दे मोइ ॥
आजा मैया मेरे प्यारे, कबके दरसन बिनु हम ठाड़े ।
तरसि रहे नैना अब सारे ॥
है तू दरसन आइकैं, मति मनमें सकुचाइ ।
लता वृच्छ तैं निकसिकैं, मूरति नैंक दिखाइ ॥
ब्रजबासी हम लला तुम्हारो, गहकि बुलावैं तोइ ॥१॥ ऊधो०
तू तो मैया ! है अति ज्ञानी, तैंने मनमें धवका ठानी ।
आइ सुना दै मीठी बानी ॥
बदरीबनमें हम सुन्यो, जाकूँ नहिं पतियाय ।
ब्रजबासी बनिकैं बसै, कुसुम सरोवर आय ॥
हम ब्रजबासी तू ब्रजबासी, बुद्धि गयी का खोय ॥२॥ ऊधो०
अरे लजाले बात दता दै, दरसन दैकैं सोक मिटा दै ।
अपनो प्यारो रूप दिखला दै ॥
तेरी सूँ अब कहत हैं, बेगि न प्रकटै मित्र ।
हमरे ब्रजमें बास करि, दुखी करै क्यौं चित्त ॥
क्यौं नाहिं बोले अरे हठीले, कहा गयो तू सोइ ।
ऊधो तेरी बलि बलि जाऊँ, अपनो दरस दिखावै मोइ ॥३॥

अबके महिला मण्डली आ गयी वे गाने लगीं—

ऊधो ! फिरि सन्देश सुनाओ ।
पहिले ब्रजमें तुम जब आये, नन्दनँदन सन्देशो लाये ।
सीतल छतियाँ तब तुम कीन्हीं, अब फिरि बात बताओ ॥१॥

पहिले तुम रथ चढ़िके आय, अबनौ दुर्ज्जनियाँ समाय।
तुरत निकसिके लाला आओ, अब काहे नरकाओ ॥७

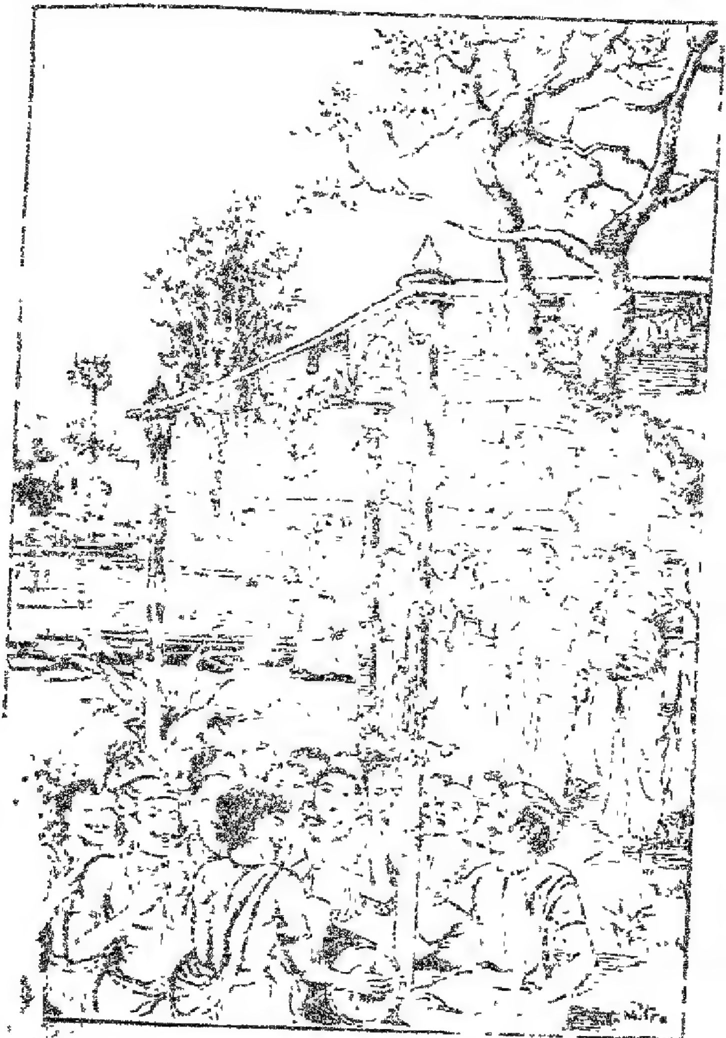

[लताकुञ्ज से ब्रह्मजी का प्रकट होना]

तुम्हरी आँसों भरि कासी, धारि तुम्हरी उर माँहि
हमरे लहा नीन्दि है कबीं, अब कहौं नहीं छिपाये
हरन लिया हम सब है प्यासी, इस बहिर्याँ मरहैं व्रजवासी।
लखा तुम्हारे हैं अविनासी, कहेंकु कन्हैया ॥४॥

[सबने आश्चर्य के साथ देखा व्रजवासियों की प्रेम भरी बातें सुनकर गुल्मलताओं के मध्य से पीताम्बरधारी उद्धवजी निकलकर शनैः-शनैः दर्शकों के समीप आने लगे। वे वनमाला गुञ्जमाला धारण किये थे। मुख से माधव के मधुमय मधुर नामों का गान कर रहे थे। उनके आगमन से सभी भक्त समुदाय परम प्रमुदित हुए तथा "उद्धवजी की जय" बोलने लगे।]

पटाक्षेप

पञ्चम दृश्य

[स्थान—कुसुम सरोवर]

[पहिले से ही निर्मित उच्चासन पर उद्धवजी विराजमान हुए। महाराज परीक्षित् ने तथा वज्रनाभजी ने उनकी विधिवत् पूजा की।]

उद्धव—नृपवर परीक्षित्! आज तुम्हें देखकर मुझे परम हर्ष हुआ। तुम परम भगवत्भक्त हो?

परीक्षित्—प्रभो! मैं तो परम अभागी हूँ, न मैं भगवान के भली भाँति दर्शन कर सका, न उनकी पूजा का ही अधिकारी बन सका। मेरे पितामह अल्पावस्था में ही मेरे सिर पर भू मण्डल का भार लादकर हिमालय को चले गये। आज कुछ मेरा भाग्योदय हुआ है, जो आप जैसे परम भागवत के दर्शन हो सके। मैं वज्रनाभ को देखने, दादियों के चरण स्पर्श करने आया था। आपके दर्शनों से मैं कृतार्थ हो गया।

परीक्षित—भगवन ! अब हमें श्रीकृष्ण भगवान के दर्शन तो होते
नहीं रहे। हमारे उद्धार का कोई उपाय बताइये।

उद्धव—राजन ! भगवान कहीं चले थोड़े ही गये। ब्रज उनका
स्वरूप है, ब्रज को छोड़कर वे कहीं जाते नहीं। श्रीमद्-
भागवत में वे सदा सन्निहित रहते हैं। भागवत सेवन से
ही संसारी लोगों का उद्धार हो सकता है।

परीक्षित—भगवन ! श्रीमद्भागवत के पारायण के कै प्रकार हैं ?

उद्धव—त्रिगुणमय जगत् में समस्त वस्तुएँ त्रिगुणात्मक हैं। भाग-
वत के भी सात्विक, राजस और तामस तीन प्रकार हैं।
मासिक, पाक्षिक पारायण सात्विक हैं, सप्ताह राजस है,
वार्षिक पारायण तामस है। गृहस्थियों के लिये सप्ताह ही
लाभ प्रद है, संन्यासियों को मासिक उपयुक्त है। ब्रह्म-
चारियों तथा वानप्रस्थियों को पाक्षिक पारायण परम
अनुकूल है। मैं इन महिषियों को ब्रजनाभ को मासिक
पारायण ही श्रवण कराऊँगा।"

परीक्षित्—प्रभो ! मुझ अभागे को आपने क्यों छोड़ दिया ? क्या
मैं श्रीमद्भागवत श्रवण का अधिकारी नहीं हूँ ?

उद्धव—राजन ! आपको तो श्रीमद्भागवत परमहंस चक्र चूड़ा-
मणि भगवान शुकदेवजी सुनावेंगे। आप तो इस समय
हस्तिनापुर में जाकर समस्त प्रजा का पालन करें। पृथ्वी
पर कलियुग का प्रवेश हो गया है, वह यहाँ आकर भी
कथा में विघ्न कर सकता है अतः अब आप दिग्विजय
करके कलियुग जहाँ मिले वहीं उसका निग्रह करें।
श्रीमद्भागवत के आप ही एकमात्र अधिकारी हैं। नारद
जी को भक्ति के उद्धार हेतु सनकादि कुमार कथा सुना-
वेंगे और तुम्हें भगवान शुकदेव, अब आप जाइये।"

[उद्धवजी की आज्ञा शिरोधार्य करके महाराज परीक्षित् उनकी पूजा प्रदक्षिणा करके हस्तिनापुर चले गये। उद्धवजी ने एक महीने तक श्रीमद्भागवत की सरस कथा सुनायी। तभी वहाँ स्वयं साक्षात् श्रीकृष्ण परिकर सहित प्रकट होकर कमनीय क्रीड़ा करने लगे। भक्तों को अपने दर्शनों से कृतार्थ किया। महि-षियों का वियोग जन्य दुःख दूर किया। गोप लोग तो महिषियों की छाया को उठा ले गये थे। यथार्थ महिषी तो व्रज में श्रीकृष्ण सान्निध्य पाकर परम कृतार्थ हुईं। श्रीकृष्ण के परिकर पार्षदों सहित दर्शन पाकर महिषी तथा वज्रनाभ कृतकृत्य हुए, सब एक स्वर से जय ध्वनि करने लगे। बोलो भक्त और भगवान् की जय।]

छप्पय

(१)

बोले उद्धव—भूप ! भागवत मम गुरु दीन्हीं।
सिर धरि दण्ड प्रनाम करी परिकम्मा कीन्हीं॥
पारायन करि मास श्यामको सखा कहायो।
सखिन सुहृद सम्बन्धि कृष्ण कहिकें अपनायो॥
कथा कहूँ कलि कतरनी, भक्त लहहिँ सुख कृष्णरस।
करें परीक्षित कलिदमन, पावै जगमें विपुल यश॥

(२)

गये धाम जब श्याम आइ कलि विघन मचावैं।
विजय दशहुँ दिशि करहु तुरत कलिवश ह्वै जावैं॥
कहैं परीक्षित—देव ! कथा मोहिं न छुड़ावैं।
उद्धव बोले—तुमहिँ आइ शुकदेव सुनावैं॥
उद्धव आयसु सिर धरी, गये भूप कलि दमन हित।
राज-वज्र मनिबाहु-सुत, दयो कथामें भये रत॥

(३)

मास दिवस तक कथा सुनी सब संसय नासे ।
रास रजनि राकेश राधिका रमन प्रकासे ॥
सबनि स्वरूप प्रबोध भयो निज लीला प्रविसे ।
ब्यौहारिक जग त्यागि आजु हरि के जनि बिकसे ॥
गोवरधन, उपवन, सघन, सुमन कुञ्ज वन-वन फिरत ।
सीतल भावुक जननि हरि, परिकर सँग विहरत सतत ॥

[पटाक्षेप]

प्रथम अङ्क समाप्त

द्वितीय अङ्क

प्रथम दृश्य

[स्थान—श्रीवृन्दावन यमुना तट मदन कुञ्ज की छाया ।]
[नेपथ्य में सुमधुर संगीत सुनाई दे रहा है ।]

पद

धन्य यह वृन्दावन को धाम ।
जहाँ रास रस रैनिमें रंजित, बिहरत स्यामा-स्याम ॥१॥
सरवर कुञ्ज गुंजत अलि वृन्दनि, कालिन्दी ललित ललाम ।
जित मकरन्द पान-मधुपनि बिहरत, बहुत छबिन अभिराम ॥२॥
फूल, कुसुम पांखुर, मन्मथ बन, नाचत सकल सजाम ।
शीतल मन्द सुगन्धित नित प्रति, बहति वायु अति ठाम ॥३॥
जहँ ललिता ब्रजनाथ विमोहनि, सरस रास रचि धाम ।
हँसत-हँसावत रस बरसावत, केलि करत घनश्याम ॥४॥
ग्वाल बाल बनमाहिं चरावत, धेनु बजावत स्याम ।
हल मूसल लै फिरत संग नित, कृष्ण बन्धु बलराम ॥५॥
गोपी गोप बछरिया पावन, सबही शोभा धाम ।
जिन देखो नित गाइ रहे सब, मधुर-मधुर प्रभु नाम ॥६॥

[नारदजी का प्रवेश]

वीणा बजाते हुए गाते हैं—

भजो रे भैया जन-मनहारी श्याम ।
श्याम नाम भवरुजकी औषधि, सब ही आवै काम ॥१॥
नश्वर तन धन अनरथकारी, यह सब नहिं निष्काम ।
कृष्ण-कृष्ण कहि कृष्ण नाम रटि, धारो हिय घनश्याम ॥२॥

मैं मोगमि कैसिके सुजम्, सुन्यो हरिको नाम।
छाँड़ि कपट छल अबहु भजिले, श्रीहरि शोभा धाम ॥३॥

(स्वतः ही) अहा यही वृन्दावन है, जहाँ व्रजवल्लभ अट वेताओं के साथ नित्य रास रचाते हैं, रासस्थली में रस बरसाते व्रजाङ्गनाओं को सरस क्रीड़ा करके हँसाते हैं, वन-वन में गाय चराते हैं, ग्वाल-बालों को कमनीय क्रीड़ायें करके ते हैं। यह वृन्दावन धन्य है, धराधाम का मुकुट है, यह व्रज-र सरसता की स्थली है। शृङ्गार रस की जननी है। माधुर्य

[नारदजी और भक्ति ज्ञान वैराग्य]

लेता है। ऐसा रस अन्यत्र दुर्लभ है। यहाँ चारों ही प-श्री-रस है। इससे यह स्थली ओत-प्रोत है। (कान) अरे, यह तो कौन रहा है, वृन्दावन में भी पीड़ा, चलूँ खूँ, किसी की कुछ सेवा कर सकूँ तो। अपने इस जीवन

सार्थक बना सकूँगा। परोपकार सेवा ही मेरा व्रत है। जीवों
प्रभु के सम्मुख करना ही मेरा अनुष्ठान है।

[आगे बढ़ते हैं, सरकुंज ही एक सघन लता कुञ्ज की छाया
में परम रूप लावण्यवती युवती उदास बैठी क्रन्दन कर रही
उसके सम्मुख दो वृद्ध जर्जर कोढ़ग्रस्त वृद्ध पुरुष पड़े खाँस-
र ले रहे हैं। नारदजी वहाँ ठिठक जाते हैं और इस युवती से
[illegible] हैं।]

नारद—देवि! तुम कौन हो?

युवती—देवर्षि! मैं भक्ति हूँ।

नारद—ये दो वृद्ध पुरुष कौन हैं?

युवती—ये ज्ञान और वैराग्य हैं।

नारद—फिर तुम रो क्यों रही हो?

युवती—तुम कौन हो? इतनी ममता से तुम क्यों पूछ
रहे हो?

नारद—मैं नारद हूँ। तुम्हारी कुछ सेवा कर सकूँ, तो मैं
अपने को भाग्यशाली समझूँगा।

युवती—अहा! आप महर्षि नारद हैं! ब्रह्माजी के मानस
पुत्र हैं। परोपकार ही आपका व्रत है, तनिक ठहर
कर मेरी करुण कथा सुन लीजिये!

नारदजी—मैं ठहरा हूँ। हाँ आप अपनी कहानी सुनाइये।

युवती—महर्षे! मैं अनन्त काल से वास करने वाली प्रभु प्रिया
भक्ति हूँ। अपना प्रचार-प्रसार करने की कामना से
समय-समय पर विभिन्न स्थानों में अवतार लेकर
मैं भगवान् भक्ति का प्रचार करती हूँ। अबके मैंने
[illegible] में से जाकर द्रविड़ देशों में अवतार लिया।

नारदजी—फिर?

युवती—[illegible] देशों में [illegible] [illegible] वाली

ने मेरा बड़ा आदर किया। फिर मैं कर्णाटक में चली गयी। वहाँ मेरी वृद्धि हुई। बड़ी हुई। वहाँ से मैं महाराष्ट्र में आयी। वहाँ मेरा उतना आदर नहीं हुआ मेरे इन ज्ञान वैराग्य पुत्रों के सहित मेरी पूजा हुई। फिर मैं गुर्जर प्रान्त में आयी। वहाँ मैं बूढ़ी हो गयी।

नारदजी—बूढ़ी क्यों हो गयीं?

युवती—पाखण्डियों के कारण। गुजरात में अधिकांश पाखण्डियों की पूजा होती है। साधु न होकर जो साधुओं का वेष बना लें, त्यागी न होकर जो त्यागियों का-सा ढोंग रच लें। ऐसे लोग उस प्रान्त में विशेष पुजते हैं। यह सब देखकर मैं फिर अपने यथार्थ मूल स्थान ब्रज में आ गयी। यहाँ आते ही मैं पूर्ण युवती बन गयी। किन्तु मेरे ये दो पुत्र ज्ञान और वैराग्य परम वृद्ध बन गये।

नारदजी—ये वृद्ध क्यों बन गये?

युवती—व्रजवासी इनका आदर ही नहीं करते।

नारदजी—फिर तुम रोती क्यों हो?

युवती—रोने की बात ही है। माँ युवती, बेटा जर्जरकाय वृद्ध। कोई क्या कहेगा।

नारद—तुम चाहती क्या हो?

युवती—चाहती यही हूँ कि इनकी वृद्धावस्था दूर हो जाय, ये युवक बन जावें। कोई औषधि जानते हो तो बताओ।

नारदजी—हाँ, मैं औषधि जानता हूँ। वेद, वेदाङ्ग, ब्रह्मसूत्र, गीता, उपनिषद् ये सब ज्ञान वैराग्य के पोषक

है। इसकी औषधि को मैं कानों के द्वारा इनके हृदय में प्रवेश करता हूँ।"

ती—कराओ नारद ! तुम बड़े परोपकारी हो।"

नारदजी ने उनके कान में वेद वेदाङ्ग, गीता, उपनिषद् चिल्लाकर सुनाये। सुनकर वे कुछ उठे फिर अचेत होकर वे।"]

भक्ती—नारद ! ये उपाय तो हैं, किन्तु युग-युग में उपाय बदलते रहते हैं, अब कलियुग है। इसकी औषधि खोजो।

नारदजी चिन्ता में पड़ गये। तब आकाश वाणी हुई सन्तों रूप ज्ञानी वे तुम्हें उपाय बतायेंगे।]

ने मेरा बड़ा आदर किया। फिर मैं कर्णाटक में चली गयी। वहाँ मेरी वृद्धि हुई। पुष्टि हुई। वहाँ से मैं महाराष्ट्र में आयी। वहाँ मेरा उतना आदर नहीं हुआ मैं इन ज्ञान वैराग्य पुत्रों के सहित मेरा पूजा हुई। फिर मैं गुर्जर प्रान्त में आयी। वहाँ तो मैं बूढ़ी हो गयी।

नारदजी—बूढ़ी क्यों हो गयी ?

युवती—पाखण्डियों के कारण। गुजरात में अधिकांश पाखण्डियों की पूजा होती है। साधु न होकर जो साधुओं का वेष बना लें, त्यागी न होकर जो त्यागियों का-सा ढोंग रच लें। ऐसे लोग उस प्रान्त में विशेष पुजते हैं। यह सब देखकर मैं फिर अपने यथार्थ मूल स्थान व्रज में आ गयी। यहाँ आते ही मैं पूर्ण युवती बन गयी। किन्तु मेरे ये दो पुत्र ज्ञान और वैराग्य परम वृद्ध बन गये।

नारदजी—ये वृद्ध क्यों बन गये ?

युवती—व्रजवासी इनका आदर ही नहीं करते।

नारदजी—फिर तुम रोती क्यों हो ?

युवती—रोने की बात ही है। माँ युवती, बेटा जर्जरकाय वृद्ध। कोई क्या कहेगा।

नारद—तुम चाहती क्या हो ?

युवती—चाहती यही हूँ कि इनकी वृद्धावस्था दूर हो जाय, ये युवक बन जायँ। कोई औषधि जानते हो तो बताओ।

नारदजी—हाँ, मैं औषधि जानता हूँ। वेद, वेदाङ्ग, ब्रह्मसूत्र, गीता, उपनिषद् ये सब ज्ञान वैराग्य के पोषक

है। इनको औषधि को ले कानों के द्वारा इनके
हृदय में प्रवेश करता हूँ।"

मी—कराओ नारद! तुम बड़े परोपकारी हो।"

नारदजी ने उनके कान में वेद वेदाङ्ग, गीता, उपनिषद्
चिल्लाकर सुनाये। सुनकर वे कुछ उठे फिर अचेत होकर
गये।"]

मी—नारद! ये उपाय तो हैं, किन्तु युग-युग में उपाय
बदलते रहते हैं, अब कलियुग है। इसकी औषधि
खोजो।

नारदजी चिन्ता में पड़ गये। तब आकाश वाणी हुई सन्तों
ण जाओ वे तुम्हें उपाय बतावेंगे।"]

छप्पय

बोली मुनिनैं भक्ति—सुतनि उद्धार बनाओ ।
होहिं तुरत चैतन्य युक्ति कछु अपर लगाओ ॥
सोना अरु वेदान्त सुनायो नहिं ते जागे ।
कहैं कौन शुभ काज ध्यान तुमि करिवे लागे ॥
गगन गिरा निहि छिन भई, करौ अब चिन्ता तजौ ;
साधु बतावें युक्ति शुभ, तातैं अब सन्तनि भजौ ॥

[आकाश वाणी सुनकर नारद सन्तों की खोज में उनसे युक्ति पूछने वीणा लिये हुए चल पड़ते हैं ।]

[पटाक्षेप]

द्वितीय—दृश्य

[स्थान—एक नदी. नारदजी साधुओं के स्थान पर जाके पूछते सभी सन्तों के स्थानों पर भटक रहे हैं ।]

[एक सन्त के यहाँ नारदजी पहुँचते हैं]

सन्तजी—आओ. ब्रह्मर्षे ! कैसे कष्ट किया ।

नारद—

जगमें बूढ़े भक्ति सुत, मूर्छित ज्ञान विराग ;
औषधि कछु बताय दें, तातें जागें जाग ॥

हँसकर सन्तजी बोले—

ब्रह्मपुत्र देवर्षि तुम, सबकूँ युक्ति बताय ;
प्रभु सन्मुख जोवनि करो, हमतैं पूछो आय ?
कछु नहिं जानें हम मूढ़, हो तुम ज्ञान प्रवीन ।
सहाँ हुँ यहँ हम स्वयं हो, खोजो द्वार नवीन ॥

सुनते ही नारदजी चल देते हैं। दूसरे सन्त के
पहुँचते हैं। सन्तजी उनका सत्कार करते हैं।]

जे मैं पूछें भक्ति सुत, मूर्छित ज्ञान विराग।
औषधि कछू बताय दें, जाते जागें आग॥

यह प्रस्थानत्रयी कही, सेवें भय भगि जाय।
जो इन जाने सो तुमनि, कीजे सकल उपाय॥

इसी सभी तीर्थों में घूमे कोई भी ज्ञान वैराग्य की तन्द्रा
उपाय नहीं बता सका। नारदजी निराश होकर सोचने

स्वतः ही)—अब मैं क्या करूँ? नभवाणी ने तो
कहा—सन्त ही तुम्हें सरल साधन बता देंगे। जिससे
ज्ञान वैराग्य सहित भक्ति का उद्धार होगा। सभी
सन्तों के समीप तो गया। किसी ने भी सरल सुगम,
सरल साधन नहीं बताया। अब चलूँ उत्तराखण्ड
की ओर वहाँ बद्रीवन में बैठकर तपस्या करूँगा।
तपस्या से ऐसी कोई बात नहीं जो सिद्ध न हो सके।
चलूँ उधर ही चलूँ।

[नारदजी उत्तराखण्ड की ओर चल दिये]

छप्पय

नभवानी सुनि चले देव-ऋषि सन्तनि खोजन।
तीरथ तीरथ फिरे सरित, वन, उपवन पावन॥
सबनि पूछें प्रश्न किन्तु उत्तर नहिं पावें।
अमित दुखित अति भये करन तप बद्री आवें॥

तहाँ मिले सनकादि मुनि, समाचार पुनि परि कह्यो ।
पुर–उद्धारक प्रश्न सुनि, उन्ह सुनति हिय निर्णय गयो ॥

नारद और सनकादि

[पटाक्षेप]

—※०※—

तृतीय–दृश्य

[स्थान—बदरीवन]

[नारदजी बदरीवन में पहुँचकर सन्यासाश्रम की ओर जा रहे हैं। उन्हें पीछे से (नारद, नारद) ऐसा शब्द सुनायी पड़ता है, पीछे फिर कर देखते हैं तो सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनातन

[illegible] दिखायी देते हैं। नारदजी उनको साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं।]

श्री सनातन—नारद! किधर जा रहे हो?

नारद—भगवन्! यहीं बदरीवन में तप करने आया था। सौभाग्यवश यहाँ आपके भी दर्शन हो गये।

सनातन—तुम कुछ चिन्तित से दिखायी देते हो?

नारद—हाँ, भगवन! मुझे एक बड़ी भारी चिन्ता है।

सनातन—बताओ तो तुम्हें क्या चिन्ता है?

नारद—श्रीवृन्दावन में मैंने भक्ति देवी को देखा वह रो रही थी, उसके ज्ञान और वैराग्य दो पुत्र वृद्ध हो गये हैं। उनकी वृद्धावस्था दूर कैसे हो? आकाशवाणी ने कहा सन्त ही सत्साधन बतायेंगे। मैं अनेक सन्तों के समीप गया। किसी ने भी उनके उद्धार का मार्ग नहीं बताया। यही मुझे चिन्ता है, उनका उद्धार कैसे हो।

दोहा

[illegible]

[illegible]

सनन्दन—देखो, एक सोमाश्रृङ्ग अहंता ममता से विरत साधु होता है। उसी प्रकार से यदि अहंता ममता से रहित भागवतादि ग्रन्थ के लिये किया हुआ कार्य हो परमार्थ है। स्वार्थ परमार्थ है, बिल्कुल "स्व" परमार्थ है।

नारद—अच्छा, अनन्त ज्ञान, वैराग्य तथा भक्ति का समूह किस साधन से हुए हो, कृपा कर कोई सुगम-सा साधन बताइये।

सनातन—क्या तुम जानते हो ?

नारद—मैं तो नहीं जानता।

सनातन—अच्छा ! तुमने पिताजी-ब्रह्माजी-से सुगम साधन क्या पूछा था ? और चिन्तित बैठे व्यासजी को आपने क्या उपदेश किया था ?

नारद—मैंने पिताजी से साधन जब पूछे थे, उन्होंने मुझे संक्षेप में भागवत बताया था, उसी भागवत को विस्तार करने को व्यास से मैंने कहा था।

सनत्कुमार—बस, यही भागवत समस्त मानसिक रोगों की एकमात्र औषधि है।

छप्पय

सनकादिक मुनि कहैं—श्रवण नारद ! करवाओ।
साधन और सुगम साध्य श्रवण करि लखि सुनाओ॥
एक भागवत कथा सुगम पथ ऋषि-मुनि सेवें।
अन्य सकल श्रम साध्य जगत में स्वर्गहि देवें॥
सुनत भागवत भक्ति हृदय, सुनति सकल नासि जावेंगे।
पावें भक्ति परम पद, सब जन आदि हरषावेंगे॥

नारद—तो प्रभो ! अब अन्य किसे ढूंढने जाऊँ। आप ही हमारे अग्रज हैं। आप ही मुझे भागवत सुना दें जिससे भक्ति ज्ञान वैराग्य तीनों का कल्याण हो जाय।

नारदजी की सनकादि से कथा कहने की प्रार्थना

सनत्कुमार—जब तुम इतना परोपकार कर रहे हो तो हम भी इसमें सहायक बनेंगे। आप किसी गङ्गा-तट के परम पुण्य स्थल में भागवत सप्ताह यज्ञ की तैयारी करें।

नारद—भगवन् ! आप ही किसी परम पावन पुण्यप्रद पुण्य स्थल को बतावें।

सनकादि—हरिद्वार के कुछ नीचे आनन्दवन (शुकताल) है। भगवती भागीरथी के तट पर वह परम पुण्यप्रद

कीर्त हैं। अभी तुम्हें भागवत सप्ताह सुनायेंगे आनन्दवन में जहाँ शुकदेवजी की आज्ञा परीक्षित् को भागवत सप्ताह सुनायेंगे। हम आप सब वहीं चलें।"

छप्पय

हैं नारद सम सुनिन कहौ—सप्ताह सुनावें।
होइ कहाँ शुभ यज्ञ कृपानिधि प्रभो! बतावें॥
सुनि बोले—हाँ, गंगा, कथाकी करो तयारी।
हरिद्वारके निकट गंगातट 'आनँद' भारी॥
सब आये आनन्दतट, भक्त और ज्ञानी बड़े।
ऋषि, मुनि, श्रोता व्यासकुल, श्रवण करनिको सुनि खड़े॥

(सब मिलकर गंगातट आनन्द तीर्थ को जाते हैं।)

[पटाक्षेप]

चतुर्थ—दृश्य

[स्थान—आनन्दतट—गंगा किनारे]

[गङ्गातट पर एक विशाल वट वृक्ष के नीचे उच्च सिंहासन पर सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनातन चारों भाई विराजमान हैं, नारदजी ने विधिवत् उनकी पूजा की तब चारों भाई बारी-बारी से कथा कहने लगे।]

सनक—श्रीमद्भागवत सकल शोक सन्तापों का हरण करने वाली है।

सनन्दन—भागवत कथा जो प्रेम पूर्वक श्रवण करेंगे। उन्हें इस लोक में संसारी सुख और परलोक में दिव्य सुखों की प्राप्ति होगी।

सनत्कुमार—जो विधि पूर्वक श्रीमद्भागवत का श्रवण, मनन,

करेंगी । उनकी निश्चय ही श्रीकृष्ण
चिन्हों में दृढ़ प्रीति उत्पन्न होगी ।

द्वारा भक्ति का उद्धार :

"भगवान को नित्य, मुक्त, शुद्ध तथा ब्रह्म
ी प्रेम से श्रवण करेंगे । उसका श्रवण, मनन
ध्यान करेंगी । उनके समस्त पातक कट
ते क्योंकि श्रीमद्भागवत में श्रीकृष्ण स्वयं
सदा सर्वदा विराजमान रहते हैं—

छप्पय

रे कृष्ण भागवत सागर माहीं ।
तु समाद सुखद सावन अरु नाहीं ।

तब आनन्द-कन्द उदोत प्रगट प्रभु हुँवैं ।
हाय ! अभागे लोग कथा बिनु व्यर्थ जु खोवैं ॥
यहाँ निरन्तर सुनहु नित, पढ़ि गुनिकैं पुनि-पुनि गुनौ ।
[illegible] जतन [illegible] ॥

[नारदजी के सप्ताह के समाप्त होने पर स्वयं साक्षात् श्री भगवान प्रकट हो गये, उनके साथ ही ज्ञान वैराग्य युवावस्था सम्पन्न होकर भक्ति सहित कथा स्थल पर पधारे । भक्ति महारानी प्रेम प्रकट करते हुए, दोनों हाथ उठाकर नृत्य करने लगी । ज्ञान वैराग्य भी नाचने लगे । उसी समय देवगण तथा पुराने भक्तवृन्द

[महा संकीर्तन में भगवान का प्रकट होना]

भी दिव्य देह धारण करके आ गये और संकीर्तन में सम्मिलित हो गये । उस महासंकीर्तन सम्मेलन में श्रीशुकदेवजी भी पधारे । भगवान् मुक्तामनोहर एक उच्च सिंहासन पर विराजमान हैं

के चारों ओर घूम-घूमकर 'श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे। नाथ नारायण वासुदेव' इस महामन्त्र का उच्च कीर्तन कर रहे इस महासंकीर्तन में भक्ति, ज्ञान और वैराग्य नृत्य कर रहे थे।

प्रह्लादजी—ताल दे रहे थे।

नारदजी—अपनी वीणा की तान छेड़ रहे थे।

देवराज इन्द्र—मृदङ्ग बजा रहे थे।

श्रीशुकदेवजी—हाथों को उठाकर भाव प्रदर्शन कर रहे थे।

उद्धवजी—मजीरा बजा रहे थे।

इस प्रकार भगवान् के चारों ओर नाच-नाचकर सब लोग, लय के साथ संकीर्तन में विभोर हो रहे थे। बहुत देर तक कीर्तन होता रहा। जब सब तन्मय हो गये। कीर्तन करते-करते -पोट होकर गिर पड़े तब भगवान् ने मेघ गम्भीर वाणी में —

भगवान्—भक्तों! मैं वरदान देता हूँ! जो सविधि भागवत सप्ताह सुनेंगे और तन्मय होकर कीर्तन करेंगे, वहाँ मैं अवश्य ही समुपस्थित रहूँगा।

समस्त भक्त—साधु! साधु! धन्य! धन्य भगवान् वंशीधर की जय, के घोष करने लगे। नारद अपने को कृतार्थ समझकर प्रेम के आवेश में आकर लोटने-पोटने लगे।

छप्पय

(१)

सवनें शुक मुख सुनी भागवत महिमा भारी।
बलि उद्धव प्रह्लाद सहित प्रकटे गिरिधारी॥
है हरषित हरि भक्त करैं कीर्तन प्रभु आगे।
भक्ति ज्ञान वैराग्य प्रेममत नाचन लागे॥
देहिं ताल प्रह्लादजी, नारद बीन बजाहिं कर।
इन्द्र मृदङ्ग बजाहिं शुक, भाव बताहिं उठाइ कर॥

([illegible])

[illegible]
[illegible] मैं भयो नहिं [illegible] हरिके [illegible]।
[illegible] कहैं—तेइ सब अस हम जानैं।
[illegible] कहैं—[illegible] जहँ-तहँ प्रभु आवैं॥

[श्री शुक सनकादि के सम्मुख भागवत महिमा कह रहे हैं]

एवमस्तु कहि हरि गये, मुनि इच्छा पूरन भई।
जबै कथा हरि लोक सब, कथा समापन ह्वै गई॥

[पटाक्षेप]

इति द्वितीय-अङ्क

तृतीय-अङ्क

प्रथम दृश्य

[स्थान—सरस्वती नदी]

[एक बैल का [illegible] एक पैर से खड़ा है। [illegible]]

परीक्षित—अरे नीच! तू कौन है? इस गाय और बैल को निर्दयता से क्यों मार रहा है?

[वह चाण्डाल कुछ भी उत्तर नहीं देता]

तब राजा बैल से पूछते हैं—तुम कौन हो? तुम्हें यह दस्यु-कर्मी क्यों मार रहा है?

वृषभ—राजन्! मैं न जाने किसको क्लेश देता हूँ, सभी अपने कर्मों का फल भोग रहे हैं।

राजा—मालूम होता है तुम धर्म हो। धर्म के सिवा ऐसी सुन्दर बात कौन कह सकता है। तुम्हारे तीन पैर किसने तोड़ दिये?

वृषभ—राजन्! सब समयानुसार ही होता है।

राजा—मैं अब समझा। तुम्हारे सत्ययुग में तप, पवित्रता, दया और सत्य ये चार पैर थे; अभिमान, मद और आसक्ति के कारण तीनों युगों में तुम्हारे तीन पैर नष्ट हो गये। अब सत्य के सहारे ही तुम खड़े हो। यह अन्त्यज कलियुग है, मैं अभी इसका वध करता हूँ।

(७)

[illegible] [illegible] [illegible] प्रेमसों छल-छल [illegible] ।
[illegible] [illegible] है [illegible] यहै [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] कहैं—[illegible] [illegible] [illegible] हम [illegible] ;
[illegible] [illegible]—[illegible] [illegible] जहँ-तहँ प्रभु आवैं ।।

[श्री शुक सनकादि के सम्मुख भागवत महिमा कह रहे हैं]

सनकादि आदि हरि गाये, सुनि इच्छा पूरन भई ।
गये यथा आनि लोक सब, कथा समापन ह्वै गई ।।

[पटाक्षेप]

इति द्वितीय-अङ्क

तृतीय-अङ्क

प्रथम दृश्य

[स्थान—सरस्वती तट]

[एक पैर का एक वृषभ तथा एक गौ खड़ी हैं। इन्हें राजा का वेष बनाये अन्त्यज अन्धाधुन्ध पीट रहा है। गौ बैल असहाय हुए रो रहे हैं। इतने में ही रथ पर चढ़े [illegible] करते महाराज परीक्षित वहाँ पहुँच जाते हैं। [illegible] से महाराज उस अन्त्यज से पूछते हैं]

परीक्षित—अरे नीच! तू कौन है? इन दीन गौ और बैल को निर्दयता से क्यों मार रहा है?

[वह अन्त्यज कुछ भी उत्तर नहीं देता]

तब राजा बैल से पूछते हैं—तुम कौन हो? तुम्हें यह दस्यु-धर्मी क्यों मार रहा है?

वृषभ—राजन्! कौन किसको क्लेश देता है, सभी अपने कर्मों का फल भोग रहे हैं।

राजा—प्रतीत होता है तुम धर्म हो। धर्म के बिना ऐसी सुन्दर बात कौन कह सकता है। तुम्हारे तीन पैर किसने तोड़ दिये?

वृषभ—राजन्! सब समयानुसार ही होता है।

राजा—हाँ अब समझा तुम्हारे सत्ययुग में तप, पवित्रता, दया और सत्य ये चार [illegible] आसक्ति के कारण तीनों [illegible] नष्ट हो गये। अब सत्य [illegible] यह अन्त्यज कलियुग है, [illegible] हैं।

[illegible] राजा [illegible] अनमद का वध करने
[illegible] राजा के पैरों में पड़ गया। राजा ने खड्ग खींच
[illegible] पर क्षत्रिय शस्त्र नहीं चलाता। राजा कहने

–तू कौन है ?
–मैं कलियुग हूँ। मेरा समय है।
–मेरे राज्य से तू अभी निकल जा।
–राजन ! आपका राज्य तो सर्वत्र है। मुझे भी कहीं
रहने का स्थान दें।"
–तू नीच है, अतः १–द्यूत क्रीड़ा, २–मद्यपान स्थान
३–हिंसा तथा ४–वेश्यागमन इन चार स्थानों में रह।
देव ! ये चारों तो निकृष्ट स्थान हैं। कोई पाँचवाँ
अच्छा-सा स्थान भी और दे दें।
सोचने लगे यह सुवर्ण (धन) हत्या की जड़ है,
[illegible] धन के ही पीछे होते है, अतः इसे रहने को सुवर्ण
[illegible]
–जा पाँचवाँ स्थान तुझे सुवर्ण दिया। जहाँ धन हो
वहाँ भी तू रहना।
[illegible] कहते ही कलियुग सूक्ष्म रूप से राजा के सुवर्ण
[illegible]

[illegible]

[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible] मुनि [illegible] मस्तक [illegible] ।
[illegible] ॥

[यवनिका]

द्वितीय—दृश्य

[स्थान—जंगल, [illegible] शमीक ऋषि [illegible] कुछ पीछे रह गये भूख-प्यास से व्याकुल हुए [illegible] में आये जहाँ मुनि ध्यान में मग्न थे। राजा ने ऋषि को [illegible] से चिल्लाये।]

परीक्षित्—मुनिवर ! मैं इस देश का राजा परीक्षित् हूँ। मैं भूख-प्यास से व्यथित हूँ ! मुझे खाने को कन्द मूल फल और पीने को पानी दीजिये।

[ऋषि समाधि में थे कुछ बोले नहीं]

राजा ने पुनः कहा—मुनिवर ! सुनते नहीं ! मैं कब से चिल्ला रहा हूँ।

[मुनि के फिर भी कुछ न बोलने पर पास में पड़े मरे सर्प मुनि के गले में डालकर राजा चले गये।]

ऋषि पुत्रों ने नदी तट पर बैठे शमीक पुत्र शृङ्गी से जाकर कहा—ऋषि पुत्र—अरे शृङ्गी ! तू यहाँ बैठा है, तेरे पिता के कण्ठ में तो मरा हुआ सर्प पड़ा है।

शृङ्गी—मेरे पिता के कण्ठ में मृतक सर्प किस दुष्ट ने डाल दिया ?

न पुत्र—हस्तिनापुर का राजा परीक्षित आया
मृतक सर्प को धनुष की नोक से उठा
गले में डाल कर चला गया।

परीक्षित-शमीक मुनि

सुनकर ऋषि पुत्र को अत्यन्त क्रोध आ गया। हाथ में जल लेकर उसने शाप दिया— कि कण्ठ में मृतक सर्प को डाला है, उसे यही त सात दिन में काट ले इसी से उसकी मृत्यु हो। रोते-रोते पिता के समीप पहुँचा। उसी समय जागने का समय आ गया। सम्मुख रोते हुए

शमीक—वत्स ! तुम रो क्यों रहे हो ?

शृङ्गी—पिताजी ! आपके कण्ठ में यह क्या पड़ा है ?

[मृतक सर्प को देखकर मुनि ने गले से फेंकते हुए पूछा]

शमीक—वत्स, यह मृतक सर्प मेरे कण्ठ में किसने डाल दिया ?

शृङ्गी—पिताजी ! हस्तिनापुर का राजा परीक्षित आया था, वही मृत सर्प को आपके कण्ठ में डाल कर चला गया।

(मस्तक पर हाथ रख) शमीक—महाराज परीक्षित यहाँ आये थे, आश्चर्य की बात है ।

शृङ्गी—हाँ महाराज ! वह आया था ।

शमीक—तुमने उन महाराज का स्वागत-सत्कार तो किया ही होगा ?

शृङ्गी—पिताजी ! मैंने उस अधम का ऐसा स्वागत किया कि वह जन्म भर नहीं भूलेगा ।

शमीक—(विस्मय के साथ) तुमने ऐसा स्वागत क्या किया ?

शृङ्गी—मैंने उसे कौशिकी नदी का जल हाथ में लेकर यही शाप दिया कि आज के सातवें दिन वही सर्प तुम्हें तक्षक बनकर काटेगा, जिससे तेरी मृत्यु हो जायगी ।

(क्रोधित होकर) शमीक—अरे, बच्चे ! तूने यह बड़ा लड़कपन किया । भला एक धर्मात्मा राजा को छोटी-सी बात पर इतना घोर शाप ! तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है ।

शृङ्गी—पिताजी ! समाधिस्थ मुनि के कण्ठ में मृतक सर्प डालना कहाँ धर्मात्मापन है ?

शमीक—अभी तू बच्चा है । बुद्धि का कच्चा है ! अरे, राजा

भूख प्यास से व्याकुल था। इसने परीक्षा ऐसा किया होगा, इधर पर मुझे ऐसा दोष [illegible] हुआ था।"

[—विचार] : मृतक मर्ग डालना क्या आवश्यक [illegible] है।

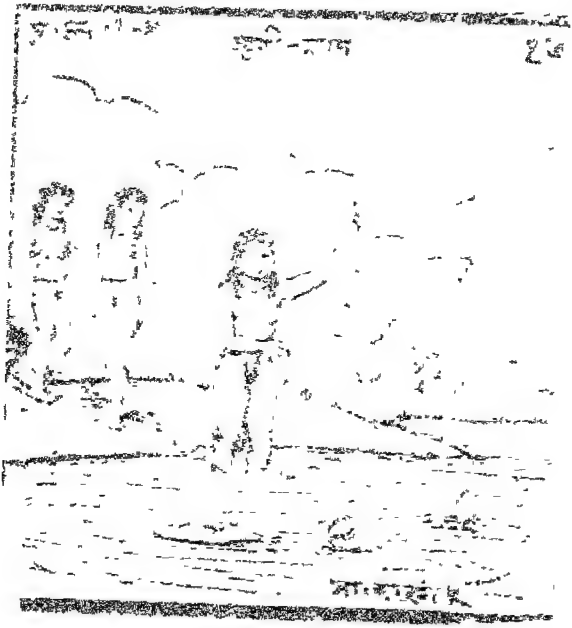

[illegible]

[illegible]] अहो, भयंकर [illegible] ! अहा, यह तो है, श्राद्ध का स्थान ही भयंकर है। [illegible] ही यह संसार शून्य बने हैं। कोई इस में [illegible] डालता है, कोई मृतक शव यहाँ [illegible] हैं।

[illegible]

[illegible]

शिष्य—मैं आज्ञा [illegible]

[illegible]

[[illegible]]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

तभी इनके हाथ से कुछ सर्प को डाल दिया। इस समय मैं न जान सकी कैसी दुर्दशा होगी। तभी [illegible] जय-जयकार किया।)

द्वारपाल—महाराज के जीवन की जय-जयकार हो।

अन्तःपुर महिलाएं—अहो! भगवान् क्या चमत्कार है।

द्वारपाल—महाराज! महर्षि शमीक के आश्रम से एक ब्रह्मचारी आये हैं। वे महाराज के लिये महर्षि का कोई सन्देश लाये हैं।

([illegible]) परीक्षित्—उन्हें तुरन्त आदर के साथ भीतर ले आओ।"

([illegible])

अशोक शिष्य—महाराज की जय हो।

परीक्षित्—विप्रवर के चरणों में मेरा प्रणाम स्वीकार हो।

शमीक शिष्य—संतुष्ट हूँ, संतुष्ट हूँ।

महाराज—भगवान् शमीक महर्षि ने मेरे लिये क्या सन्देश भेजा है, मैं तो उनका घोर अपराधी हूँ।

शिष्य—राजन्! मेरे गुरुदेव ने तो आपके अपराध को अपराध ही नहीं माना। उनकी तो आप पर महती कृपा है परन्तु........

परीक्षित्—परन्तु क्या? उसे भी निःसंकोच कहिये।"

गुरुदेव के पुत्र शृंगी ने आपको शाप दिया है, कि सात दिन में वही सर्प तक्षक बनकर आपको काटेगा। जिससे आपका परलोक प्रयाण होगा।"

परीक्षित्—बस, इतना ही।

शिष्य—मेरे गुरुदेव ने आज्ञा की है आप सात दिन में अपने मोक्ष के लिये प्रयत्न कीजिये।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[पटाक्षेप]

चतुर्थ-दृश्य

[स्थान—[illegible]]

[महाराज सर्वजित् [illegible] ([illegible]) [illegible] दूर-दूर से ऋषि-मुनि उनके समीप आ रहे हैं। ऋषि-मुनियों [illegible] महाराज बैठे हुए [illegible] रहे हैं।]

पद

महामुनि सब स्वागत करावैं ।
पावों पतित [illegible] हौं, [illegible] आप [illegible] ॥१॥
कोटि अपराध [illegible] [illegible] प्रायश्चित करावैं ।
[illegible] [illegible] [illegible] प्रभुवर पार करावैं ॥२॥

([illegible])

[illegible] सिद्धभक्त [illegible] चरन [illegible] नावैं।
[illegible] कौ [illegible] [illegible] सिखावैं ॥३॥
[illegible] [illegible] बतावैं।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥४॥
[illegible] [illegible] [illegible] ॥५॥

[illegible]

([illegible])

[illegible] [illegible] मोते [illegible] [illegible] है।
[illegible] बिना [illegible] [illegible] है ॥
[illegible] है [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] हारी ॥
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है।
[illegible] [illegible] है, [illegible] [illegible] सुनाइ है ॥

(२)

[illegible] [illegible] नन्दलाल के पास जनावैं।
[illegible] बिना [illegible] [illegible] बतावैं ॥
[illegible] [illegible] [illegible] है [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] सुन्दर [illegible] [illegible] साधन कहैं।
[illegible] [illegible] [illegible] भक्ति मुक्ति [illegible] कहैं ॥
[illegible]—[illegible] [illegible]।
[illegible]—[illegible] नहिं।
[illegible]—[illegible] करि।
[illegible]—साधन नाहिं।
[illegible]—[illegible] जहाँ।

परीक्षित—[illegible]

[illegible] ऋषि—[illegible]

परीक्षित—[illegible]

[illegible] ऋषि—[illegible]

परीक्षित—[illegible]

[illegible] ऋषि—[illegible]

परीक्षित—[illegible]

[illegible] ऋषि—[illegible]

परीक्षित—[illegible]

[illegible] ऋषि—[illegible]

परीक्षित—[illegible]

[इस प्रकार वार्तालाप हो रहा है कि तभी महामुनि शुकदेवजी वहाँ पधारते हैं। वे दिगम्बर थे, उनका सम्पूर्ण शरीर धूलि धूसरित था। मुखपर मुस्कान [illegible] आनन्द, मुख से मनमोहन के मधुर नामों का जाप कर रहे थे। वे बिना किसी के कहे उच्चासन पर आसन ग्रहण करते हैं। सभी ने उठकर उनका अभिनन्दन किया। महाराज परीक्षित ने उनकी पूजा की और साष्टांग प्रणाम करके विनती की]

परीक्षित—प्रभो! आज मैं कृतार्थ हो गया। मुझ ब्रह्मद्रोही पर आपने अहैतुक अनुग्रह किया। भगवन्! मैं विप्र शाप से शापित हूँ, मेरे जीवन के सात ही दिन शेष रह गये हैं। मुझ पर कृपा कीजिये। मुझे मुक्ति का मार्ग दिखाइये।

श्रीशुक—राजन्! सात दिन तो बहुत हैं। महाराज खट्वांग तो एक मुहूर्त में ही मुक्त हो गये थे।

परीक्षित—भगवन्! जिसकी मृत्यु निकट हो, उसे क्या करना चाहिये?

श्रीशुक—राजन्! मृत्युसमय मनुष्य को कैसे चाहिये इसी की चिन्ता होती है। मनुष्य प्राण जाते समय आसक्ति आप का छोड़ मृत्यु को, तथा भगवान् भजे, तो उसका उद्धार हो जाता है।

दोहा—कृष्ण नाम निसि दिन जपो, मृत्यु न कबहुँ बिसार।
नहिं ये ...मुक्ति नहीं, निश्चय बिन उद्धार॥

परीक्षित—भागवत क्या है?

श्रीशुक—भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र की कथा ही भागवत है, भगवत् चरित सुनने से भक्ति उत्पन्न होती है। भक्ति ही समस्त शोक मोह आदि सन्ताप को मेटने वाली है। सात दिन में भागवत सुनाकर मैं तुम्हारा उद्धार कर दूँगा। राजन्! तुम शोक मोह तथा चिन्ता का सर्वथा परित्याग करदो।

छप्पय

(प्रभो! परम पुरुषार्थ कृपा करि मोहि बतावै।
मरनशील जन करहिँ तुरत ताकूँ समुझावै॥)
सुने नृपालम बैन मौन, बदनालिमहँ आयौ।
बोले मुनि—नृप धन्य! जगततैं चित्त हटायौ॥
नृपवर! सब चिन्ता तजहु, मन-मोहनमें मन धरहु।
कहूँ भागवत ग्रन्थ अब, एक चित्त ह्वै के सुनहु॥

[श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित् को कथा सुनाते हैं। सुनकर राजा का शोक मोह सब नष्ट हो जाता। तब शुकदेवजी पूछते हैं।]

श्रीशुक—

छप्पय

आत्म चिन्तवन करो अहं सत चित कहलाऊँ।
परम धाम हौं सदा परमपद ब्रह्म कहाऊँ॥

[illegible]

[illegible] [श्रीकृष्णचन्द्र के ...] [illegible]

[illegible]

[illegible] सुकोमलि, [illegible] करै अपार ॥१॥
[illegible] कोमल [illegible], [illegible] सुन्दर आकार ;
कहाँ धरम [illegible] करम [illegible], सबु आचार विचार ॥२॥
आजु वियोग [illegible] ऐसै, मनु [illegible] आहार ;
नाथे [illegible] की लिन, हा ! हा ! नन्दकुमार ॥३॥
हा ! नँदनन्दन मन हर [illegible], वृन्दाविपिन विहार ;
हा ! ब्रजजीवन-कोटि सुतावल, ब्रजजुवती जन हार ॥४॥

[पटाक्षेप]

इति तृतीय-अङ्क समाप्त

चतुर्थ—अङ्क

प्रथम—दृश्य

[स्थान—तुङ्गभद्रा तट का एक ग्राम]

[आत्मदेव अत्यन्त उदास बैठा हुआ और झगड़ने वाली पत्नी धुन्धुली के साथ बैठा बातें कर रहा है ।]

आत्मदेव—मेरे पास विद्या भी है, धन भी है, वैभव भी है, फिर भी मैं सुखी नहीं ।

धुन्धुली—तुम्हें किस बात का दुःख है ?

आत्मदेव—जिस गृहस्थ के घर में किलकारियाँ मारते हुए खेलते-कूदते पुत्र-पुत्री न हों, वह घर तो नरक के सदृश है ।

धुन्धुली—लड़का-लड़कियों से किसने सुख पाया है । उनके पीछे सदा दुःख ही उठाना पड़ता है, रात्रि-दिन उन्हीं की चिन्ता लगी रहती है ।

आत्मदेव—तुम कैसी बातें करती हो ? गृहस्थ का सुख तो संतानों से ही है ।

धुन्धुली (मुँह मटकाकर) कैसा सुख । मैं तो सन्तान वालों को सदा दुखी चिन्तित ही देखती हूँ । फिर जब भाग्य में सन्तान है ही नहीं, तो उसके लिये दुःख करने की क्या बात है ?

आत्मदेव—तू तो समझती नहीं । पुरुषार्थ तो करना ही चाहिये । सन्त महात्मा रेख पर भी मेख मार सकते हैं । महापुरुषों के आशीर्वाद से असम्भव भी सम्भव बन जाता है ।

धनकुमारी—मुझे [illegible] पर विश्वास होगा। मुझे तो अब पर विश्वास नहीं।

आनन्देन्द्र—[illegible]

धनकुमारी—[illegible]

आनन्देन्द्र—[illegible] तुम्हें [illegible]

धनकुमारी—[illegible]

आनन्देन्द्र—[illegible]

[[illegible] आनन्देन्द्र [illegible] [illegible] आशीर्वाद दिया।]

संन्यासी—आनन्देन्द्र ! कहाँ से आ रहे हो ?

आनन्देन्द्र—भगवन् ! सुभद्रा के तट पर एक तपोवन आया है। वहीं से [आ] रहा हूँ।

संन्यासी—प्रतीत होता है, तुम्हें कोई भारी दुःख है; इसी से तुम्हारे सुन्दर मुखकमल पर उदासी छायी है। नेत्रों में अश्रु भरे हुए हैं।

आनन्देन्द्र—भगवन् ! मुझे बड़ा भारी दुःख है।

संन्यासी—यहाँ संसार के [illegible] यहाँ बैठकर दुःख का कारण बताओ।

[illegible] है। संन्यासी अपनी [illegible]]

संन्यासी—[illegible], तुम अपने दुःख का कारण बताओ ।

[illegible] दुःख का [illegible] कहता है—

[illegible] मिला अति दुःख पाऊँ ।
[illegible] में मर जाऊँ ॥
[illegible] आती है ।
[illegible] ॥
[illegible] सुन्दर लाल नहीं ।
[illegible] लाल नहीं ॥

संन्यासी [illegible] है ।]
([illegible])

संन्यासी—

[illegible] लेकर मूर्ख बना सन्तानि से सुख [illegible] पाया ।
[illegible] और [illegible] कारण दुःख सबने पाया ॥
सब छोड़ [illegible] अपनाओ, है शान्ति त्यागमें ही भाई ।
[illegible] नहिं शान्ति किसीने भी पाई ॥
इस जगमें को [illegible] पितु माता, सबही स्वारथके साथी हैं ।
सब लोग [illegible] हैं, ये [illegible] दुःखकी खानी हैं ॥

[illegible]—

अब मुझको बहुत न बहकाओ, मैं नहीं सीख अपनाऊँगा ।
सन्तान मुझे नहिं देवोगे, तो तब द्वारे मर जाऊँगा ॥
तुमको शिशु हत्या लग जावे, सब लोग तुम्हें धिक्कारेंगे ।
द्वारे करके सर्वदा जल, फिर तुमको सदा पुकारेंगे ॥
संन्यास शुष्कसे कहा धरा, घर-घरके टुकड़े खाते हैं ।
सन्तान सुख वह सुखी भला, जिसके पुरखे तर जाते हैं ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

माँ—अच्छा, तुम नहीं मानते, तो इस फल को ले जाओ। अपनी पत्नी को दे देना। इसके खाने से निश्चय ही सन्तान हो जायगी।

[ब्राह्मण फल लेता है। संन्यासीजी को साष्टांग प्रणाम कर उनकी आज्ञा पाकर घर को चल देता है।]

[पटाक्षेप]

द्वितीय-दृश्य

[स्थान—कुम्हारिन का घर]

[कुम्भुरा रोटी का आहार बैठी है । क्योंकि उसका मन नहीं लगता है उसका चेहरा चिन्ता से भरा सा है ।]

पर्णशिखि—माँ कुम्भुरा ! आज रसोई पर लालिमा भी मन को अच्छी नहीं है । आँख मेरा कुछ उदास हो रहे हैं !

कुम्भुरा—तुमने किसान सबेरे से अभी दिया ही नहीं । मैं आराम नहीं दे सकती ।

(नेपथ्य से आवाज) पर्णशिखि—अविल है माँ । तुम्हारा लिखना मैं तैयार करूँगी । आज अन्न के बिना मेरे बच्चे भूखे रह जायेंगे । कल भी उन्हें खाने को कुछ नहीं मिला था ।

(क्रोध करके) कुम्भुरा—भूखे रह जायेंगे तो रह जायें हमारी बला से । तुम्हारे बच्चों का हमने कोई ठेका ले रखा है क्या ? जब देखो तब अन्न दे दो, अन्न दे दो । हमने क्या सदाव्रत खोल रखा है क्या ? तुम्हारा खसम हट्टा-कट्टा डोला रहता है । उससे काम कराती नहीं । यहाँ माँगने आ जाती है । चलो जा ! हमारे यहाँ अन्न-फल नहीं है ।

[पर्णशिखि मुस्कराती रोती हुई खड़ी रहती है । तब उसे देखती हुई कुम्भुरा क्रोध में भर कर कहती है ।]

कुम्भुरा—हमने एक बार कह दिया । मैं अन्न नहीं दूँगी, नहीं दूँगी । तू जाती क्यों नहीं है ? मुड़चिड़ी कहीं की धक्का देकर निकाल दूँगी ।

[पर्णशिखि को भी क्रोध आ गया वह गरजकर बोली]

वहींद्मनि—[illegible] है, न जाने है न [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] किया है।

[illegible] ([illegible] [illegible] कहते हैं।

[illegible]—[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

वहींद्मनि—[illegible] ! [illegible] है, इसकी आँखें भी बाहर [illegible] [illegible] [illegible]

[[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]]

[illegible]—[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

क रत्नदेव—आर्य, क्यों तुम रहते हो इतना क्रोध ठीक नहीं।

[illegible]—तुम्हें कुछ पता नहीं है [illegible] [illegible] बार हो जाती है [illegible] [illegible] वीर कोमलता आ जाये।"

आनन्दचंद्र—[illegible] अब कुछ बस नहीं चलता तभी माँगना है। छाया वाले वृक्ष के ही नीचे लोग जाकर बैठते हैं, [illegible] फल वाले वृक्षों पर [illegible] देने से तुम्हारा क्या बिगड़ जाता है?

(हाथ जोड़कर) कुम्कुम—तुम [illegible] छूटी। मैं तो ऐसी दुनियादारों की [illegible] बात भी न सुनूँगी।

आनन्दचंद्र—अच्छा, अच्छा, मत [illegible] मेरी बात तो सुनो।

कुम्कुम—क्या बात है? मैं आज-कल कुछ भी नहीं सुनती।

आनन्दचंद्र—तुम्हारे [illegible] की—[illegible] की—ही बात है।

कुम्कुम—अच्छा, बताओ, क्या बात है?

[[illegible]] [illegible] यह फल है। एक बड़े भारी सिद्ध महात्मा ने दिया है। इसे तुम पवित्रता के साथ खा लोगी, तो निश्चय ही तुम्हारे सन्तान हो जायगी।

(प्रसन्नतापूर्वक हाथ में फल लेती हुई) तुम्हें भी इन साधुओं की बातों पर विश्वास है। अच्छा, लाओ। तुम कहते हो तो खा लूँगी।

[फल लेकर मंदिर चली जाती है। आनन्दचंद्र भी अपने स्थान में जाकर नित्य कृत्य करने लगते हैं।]

[पटाक्षेप]

तृतीय—दृश्य

प्रहसन

[स्थान—एक किसान का घर]

[एक किसान का नाम बिन्नू, स्त्री का नाम अड़बड़ी।]

बिन्नू—[illegible] है, आज काहे का साग बनाया है? (मुँह बिचका कर) [illegible] तुमने बड़े साग लाकर रख दिये हैं,

माँ चुपचाप [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

बिल्लू—अच्छा, [illegible]?

माँ—[illegible] [illegible]

बिल्लू—तुम क्या [illegible]?

माँ—[illegible] [illegible]

[बिल्लू [illegible] [illegible]]

बिल्लू—[illegible] है, [illegible] त्योहार पड़ता है क्या?

[अइयन्नो बात बनाने में तो बड़ी चतुर, क्रोध की [illegible] बन्दूक की गोली, सजने में आँधी, [illegible] में कोरी, [illegible] [illegible]]

माँ—यों एक बड़ा त्योहार है।

बिल्लू—कौन-सा त्योहार है?

माँ—आज दुइकन चौथ है।

बिल्लू—दुइकन चौथ? यह त्योहार तो मैंने कभी सुना नहीं।

माँ—नहीं सुना तो अब सुन लो।

बिल्लू—इस त्योहार में होता क्या है?

माँ—आज के दिन [illegible]

हैं। [illegible] में [illegible] की स्त्रियाँ भरती हैं। जो [illegible] रह जाते हैं, उन्हें [illegible] कहते हैं।

दोहा—[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] शुभ [illegible] है, गुड़कर गुड़कन चौथ ॥
[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] आदि ।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] रहें सब कोई ॥

[illegible] [illegible] में [illegible] गुड़कन [illegible] फेंकने पर [illegible] गिर जावेंगी। अतः गुड़के [illegible] [illegible] [illegible]। इस लोककर यह गुड़कर में [illegible] जाता है।

[illegible] गुड़कन [illegible] जाती है, लड़की [illegible] में [illegible] चावल [illegible] के बीच बड़-बड़ानी आती है।

अनुसूर्या—इन बातों के पण्डितों का पिछला भी नहीं चलता। ये पण्डित दक्षिणा लेने को तो हर समय तैयार रहते हैं, किन्तु [illegible] बातों में [illegible] कर देते हैं। कभी [illegible] कर देते हैं कभी [illegible] । यथार्थ [illegible] नहीं।

विनय—अरी, क्या हुआ? क्यों पण्डितों को कोस रही हो।

अनुसूर्या—हुआ क्या पत्थर। यहाँ के पण्डित भी पूरे मटक-[illegible] हैं। [illegible] कह रहे थे गुड़कन चौथ है, गुड़कन चौथ है। अब कहते हैं, रह रह पाँचें है। रह रह पाँचें है।

विनय—रह रह पाँचें का क्या महात्तम है?

अनुसूर्या—अब ये पण्डित ही जानें। कहते हैं—

पाँचें [illegible] [illegible], फेंके [illegible] माहिं।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] सब, रहें सुहागें [illegible] ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

निन्दक —

[illegible]

[illegible] जाती है। [illegible]

[illegible]

[illegible] जाती है।]

दूसरी सखि—सखी! आज [illegible] क्या [illegible] है।

कुन्तला—आज है [illegible] है। [illegible]

नी, [illegible] बदल न भी जायगी। भला क्या ख्याल में
भी किसी के सम्मान हो सकती है ?

[illegible]—[illegible] होने का क्या है [illegible]। [illegible]
[illegible] भी [illegible] है, [illegible] मुकाबला क्या
[illegible]

[illegible]—[illegible] भी [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ?

[illegible]

[illegible]—[illegible]
[illegible] सुकुमारी [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]—[illegible] होता ही है, [illegible] पैदा होने पर [illegible]
[illegible] जाती है।

[illegible]—[illegible] के पत्थर, सबका अन्त होता है मगर
[illegible] हो जाता है, मैंने कलेजों को पत्थर होते सुनते [illegible]
[illegible] ताकते देखे हुए देखा है। मुश्किल हो जाती है,
में [illegible] सुकुमारी [illegible] कष्ट को नहीं सह सकती।
[illegible] सर्दी का पेड़ बढ़ जाय। गाँव में आग तक
[illegible], तो मैं तो आग भी नहीं सकती।

[illegible]—[illegible] मुझे न [illegible], कोठरिया ने [illegible]।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]—[illegible]

[illegible]—[illegible]

[illegible]—[illegible]

[illegible]—[illegible]

[illegible]—[illegible] तो है [illegible] ।

[illegible]—[illegible] बहुत आवश्यक है [illegible] होता है ।

कुन्तुली—तू, कहीं [illegible] है, मैंने तुझे [illegible] सागर से उबार लिया ; अब मैं यही करूँगी ।

[[illegible] चली जाती है, कुछ काल में आ जाती है । [illegible] होता है । कुन्तुली उसे अपना [illegible] बताती है । [illegible]

[illegible] ... [illegible] ... हैं – [illegible] ... [illegible]

गोकर्ण-जन्म

[illegible] उनका नाम गोकर्ण रख दिया है) दोनों आ [illegible] जाते हैं ।]

[पटाक्षेप]

पञ्चम-दृश्य

[स्थान—आत्मदेव का घर]

[illegible] । [illegible] जाते [illegible]

[illegible]

[[illegible]]

मुझे देंगे नहीं। (पिता को भी आ गया है। पिता सिर धुन-धुनकर रोते हैं। [illegible] आँख में [illegible] बातों को [illegible] है। ([illegible] गोपाल आते हैं। पिता को रोते देखकर पूछते हैं)

गोकर्ण—पिताजी ! क्या बात है, आप क्यों रो रहे हैं ? (रोते-रोते) आत्मदेव—बेटा ! क्या बताऊँ कुपुत्र से तो निर्वंश होना ही अच्छा है ।

दोहा—देह-अस्थि अरु मांसमय, कहौं यही सबथल ।
ताकौ छाँडहु मोह सब, जाको मूल कुमूल ॥
सुत दुल्हौ भा कहौ, कौन बतावै पन्थ ।
सुन गोकर्ण ! कहौं कहा, तुम अभिज्ञानी सन्त ॥

गोकर्ण—देहेऽस्थिमांसरुधिरेऽभिमतिं त्यज त्वम्,
जायासुतादिषु सदा ममतां विमुञ्च ।
पश्यानिशं जगदिदं क्षणभङ्गनिष्ठम्,
वैराग्यरागरसिको भव भक्तिनिष्ठः ॥

(६)

धर्मं भजस्व सततं त्यज लोकधर्मान्,
सेवस्व साधुपुरुषाञ्जहि कामतृष्णाम् ।
अन्यस्य दोषगुणचिन्तनमाशु मुक्त्वा,
सेवाकथारसमहो नितरां पिब त्वम् ॥

छप्पय

(१)

अस्थि मांसनौं बनी देहमें त्यागौ ममता ।
सुत दारा तजि मोह करौ सबहूमें समता ॥
छिन भंगुर जग जानि विनासी सबकूँ जानौ ।
नाशवान सब वस्तु जथारथ इनि मत मानौ ॥
भजियौ नित वैराग्यमें, रसिक सदा बाके बनौ ।
एक मरम सबको है, भक्ति भगतिकी में सनौ ॥

[illegible]

[आत्मदेव महोदय प्रणाम कर चले जाते हैं।]

(गोकर्ण भी तीर्थ-यात्रा के लिये चल देते हैं)

[पटाक्षेप]

छठा—दृश्य

[स्थान—गुरुकुटी का द्वार]

(नेपथ्य से संगीत सुनायी दे रहा है।)

मनुज तन पाइ व्यर्थ गँवायो।

क्रोध, मद, लोभ, मोह में फँस्यो विषय भरमायो ॥१॥

[illegible] इत-उत नित भटकत, करि अघ पाप कमायो।

[illegible] जारी, [illegible] प्रपंच [illegible] ॥२॥

[illegible] जो नर तन पावै, [illegible]

[illegible] में [illegible] अमोलक, [illegible] ॥३॥

पश्चाताप कृपा करो आज, ऐसा कभी न लगाओ ।
दुष्कृत्य पाहू अवसर शुभ, नरकों कौन पछिताओ ।।४।।
(अक्का० हो) ऐसा कहते जाय । साथ तन नहिं, साहि
संसार हेतु नहीं । अब किसका होऊंगा? कैसे, अमकुल दुख
का भोग । कहाँ जाऊँ ? क्या करूँ ? घर में अन्न नहीं
पास धन नहीं । काम दुष्ट है नहीं । कैसे निर्वाह
होगा । मुझे किसी काम नहीं आवेगा । कोई अच्छा
काम नहीं मिलेगा । कोई नौकर भी नहिं रक्खेगा । चार-
कर लोगों को अपनी पकड़ेंगे । चोरी ही करूँगा । जुआ
में भी धन मिल जाता है, जुआ भी खेलूँगा । एकाकी
जीवन भार है । ब्राह्मण कोई मुझे अपनी लड़की क्यों
देगा । वेश्यायें रक्खूँगा । धन तो नहीं पूरी पौन । चोरी
के धन से उन्हें सन्तुष्ट करूँगा । (इस प्रकार सोचकर
चोरी करने लगा । धन के लालच से पाँच वेश्यायें भी
आ गयीं । वेश्या धन के लिये नित्य झगड़ने लगीं ।)

वेश्या—तुमको लिया फँसाय, धन पट गहना दीजिये ।
नाहीं आगि लगाय, बने निकट्टू ही रहो ।।
वेश्या—हम सबको तुम धनी हो, चाहें तुमरी ओर ।
लेत नो मुखचे-लगनी, कामी कांची चोर ।।
वेश्या—धन पैसा कैसा सुगम, पैसा से सुख होय ।
पैसा यदि नहिं देवो, छोड़ जायेंगी तोय ।।
वेश्या—मिठनी चुपरी बात करि, फँसा लिया है तोहि ।
मेरे मन को नहिं करो, मारि भगाऊँ तोहि ।।
वेश्या—बढ़ि-चढ़ि अति ही प्रशंसा, करी बनाई बात ।
मेरे मन को नहिं करो, मारूँगी दो लात ।।

[वेश्याओं को धन लुटाकर धुन्धुकारी निर्धन हुआ। और वह चुरा के सब धन ले आया था, वेश्याएँ प्रसन्न नाना प्रकार की बातें कर रही थीं। उनके पास बैठ प्रशंसा करते हुए कहा—]

धुन्धुकारी—तुम सब तो मेरी प्राणप्रिया हो, जीवनाधार हो, मैं तुम्हारे लिये सोता हूँ, जग से सबों को प्रसन्न कर दूँगा। तुम्हारे लिये सुन्दर-सुन्दर वस्त्र बहुमूल्य आभूषण और नाना प्रकार की मिठाइयाँ लाऊँगा। तब तो तुम प्रसन्न हो जाओगी।

वेश्यायें—लाकर देते तब ही तो। अच्छी बात है कल तक और प्रतीक्षा करती हैं।

[धुन्धुकारी राजमहल में चोरी करने जाता है बहुमूल्य वस्त्र आभूषण चुरा कर लाता है। वेश्याओं को परम प्रसन्न होकर अपने हाथों से पहिनाता है। उन्हें प्यार करता है। प्रसन्न होकर वे वेश्यायें एकान्त में जाकर सलाह करती हैं।]

पहली वेश्या—वस्त्र तो बहुमूल्य हैं, आभूषण तो रानी-महारानियों के पहिनने के हैं। कहाँ से इतनी बहुमूल्य वस्तुएँ ले आया?

दूसरी वेश्या—ये कहाँ से आया? कोई व्यापार करता है क्या? चोरी करके लाया है।

तीसरी—इतनी बड़ी चोरी कैसे करी, कहाँ करी। पकड़ा भी नहीं गया!

चौथी—यह तो निश्चय है यह साधारण घर की चोरी का माल नहीं। राजमहल से चोरी करके लाया है।"

पाँचवीं वेश्या—राजा की चोरी छिप नहीं सकती। अभी राज-

[illegible] हूँ । [illegible]
दुर्जन पर टाँगना दूँगा । इस सबको मारा-मार के
छाल दूँगा,

[illegible]—तो हम सब अपने बचने का क्या उपाय करें ?

दूसरी—उपाय नहीं तो क्या, पकड़ा भी अब अवश्य जायगा। इन सब को इसके कारण पकड़ी जायेगी। इसके अपराध तो नहीं है कि जब हम इसे पकड़कर टुकड़े-टुकड़े नदी में बहा दो।

[illegible]—यही सबसे उपाय है। इसे बाहर मुझे दिया है, तब यह अपने को आप हम सब मिलकर इसे यहीं गड्ढा खोदकर गाड़ देंगी। अब पहिले गड्ढा खोद लो।

[वे नारी बे [illegible] गड्ढा खोदा। बुद्ध ने उन्हें आत्यधिक [illegible] किया। वह क्रोधान्ध करके अचेत होकर पड़ गया। [illegible] ने उसे उठाकर कन्धों में डाल दिया। और उसका गला घोंटने लगीं। उसकी जीभ निकल आयी, किन्तु प्राण नहीं निकले, तब उन्होंने लकड़ी के डण्डे उसके मुख में भर दिये। यहाँ दुर्दशा से वह मरा, तब उसे सबने गड्ढे में गाड़कर उसे पाट दिया। प्रातःकाल वे भिन्न भिन्न स्थानों को चली गयीं। कुन्दकुमारी मरकर [illegible] प्रेत बन गया।]

उल्लाला

पट पर चालिका पाँच मिलि, कहि चोरि धन पट लिखहिं ।
लखि आभूषण अधिक लिहि, वध करिबो सोच्यो मनहिं ।।

छप्पय

गहु कासि दुखमहिं अजिनि अरु जीवन छिद्र कीन्हों ।
ताहि भूमिमें गाड़ि थल सबने कीन्हों ।।

देत दुःख सब मोहि करत निज-निज कुकर्मनि को।
कबहुँ निज विश्वास करै नाहिं हरि कुलटनिको।
धुन्धुकारी वह यातना, अहि अग्नि दुःख सब नहि जायो।
सोच करत कारन कुटिला, प्रेत भयानक भरि भयो॥

[पटाक्षेप]

सप्तम—दृश्य

[स्थान—आत्मदेव का खंडहर बना निर्जन घर]

[तीर्थ-यात्रा से गोकर्ण लौटकर आते हैं। अपने घर की ऐसी दुर्दशा देखकर दुखी होते हैं। घर को झाड़-बुहार कर लीप

[प्रेत गोकर्ण को देख धुन्धुकारी का रुदन]

कर रात्रि में सोते हैं। रात्रि में उन्हें भेड़ा दिखायी दे, कभी हाथी, भैंसा, जलती अग्नि दिखायी दे। पुनः सब में वहीं विलीन हो

[illegible]

गोकर्ण—तुम कौन हो ?

प्रेत—भैया ! मैं तुम्हारा अधम भाई धुन्धुकारी हूँ।

गोकर्ण—तुम्हारी यह दुर्दशा कैसे हुई ?

प्रेत—मेरे पापों का फल है। भैया, मेरे उद्धार का कोई उपाय करो।

गोकर्ण—मैंने सुना तो था तुम्हारी मृत्यु हो गई है। मैंने तुम्हारे निमित्त गया में श्राद्ध भी किया।

प्रेत—भैया, मेरे पाप इतने भयङ्कर हैं कि सैकड़ों गया श्राद्ध से भी मेरा उद्धार असम्भव है। कोई दूसरा ही उपाय सोचो। तुम तो पण्डित हो।

गोकर्ण—अच्छा, कल सोचूँगा। तुम निश्चिन्त हो जाओ।

[प्रेत का अन्तर्धान हो जाना। दूसरे दिन गोकर्ण ने अपनी तपस्या से सूर्य की गति को रोक कर उनसे धुन्धुकारी के उद्धार का उपाय पूछा।]

[सूर्य मण्डल से अस्फुट वाणी निकली—श्रीमद्भागवत के सप्ताह से ही इसका उद्धार सम्भव है। सूर्य वाणी सभी ने सुनी थी। सभी ने साथ-साथ सप्ताह की तैयारियाँ कीं। उच्चासन

ने बैठकर गोकर्ण सप्ताह की कथा कहने लगे। प्रेत एक बाँस और का गाँठ की नली में बैठकर सप्ताह सुनने लगा। सात दिन में सातों गाँठ फट गया। प्रेत दिव्य रूप धारण करके अपने चला गया। सबको बड़ा आश्चर्य हुआ।)

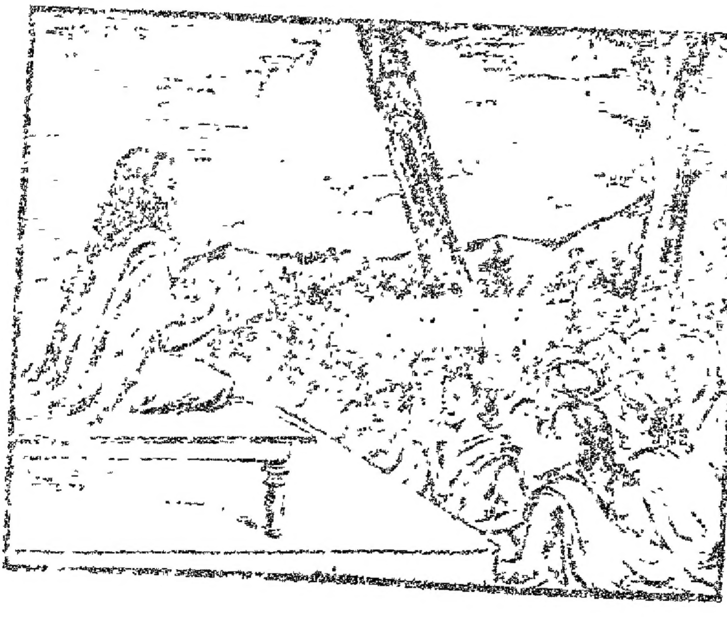

(धुन्धकारी प्रेत बाँस में बैठा गोकर्ण से कथा सुन रहा है।)

कुछ लोगों ने कहा—कथा तो सभी ने सुनी किन्तु गोकर्णजी ने अपने भाई को ही बैकुण्ठ पहुँचाया। यह तो बड़ी बात है।

—अर्थात्, राजा असंग का फल भावना के अनुसार धुन्धुकारी ने तन्मय होकर कथा सुनी इससे मुक्ति हो गयी। आप सब भी तन्मयता से सुनें तो मुक्ति हो जायगी।

[धुन्धुकारी-उद्धार]

—गोकर्णजी! आप दूसरा सप्ताह सुनावें हम स- [illegible] करते हैं।

तब पुनः सप्ताह की तैयारियाँ की। उनके सत्कार [illegible] विमान आये। साक्षात् भगवान् ही भक्त [illegible] होने लगे। सब निर्विकार होकर, गाने लगे।

[illegible]

[[illegible]]

[सब लोग जय-जयकार करते हैं, अन्त में सब गाते हुए नाचते हुए, आनन्द से [illegible] आरती करते हैं।]

[illegible]

[illegible]

[illegible]